॥ ओ३म् ॥

भारतीय प्राचीन राजनीति

लेखक—

स्व० श्री पं० भगवद्दत्त जी

प्रकाशक—

रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़

(सोनीपत-हरयाणा)

द्वितीयवार	संवत्	मूल्य
५००	२०४४	२-५०

मुद्रक—रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस, बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)।

प्रकाशकीय

हम स्वर्गीय श्री पं० भगवद्दत्त जी का लेख जिसे उन्होंने सन् १९५१ के मेरठ में होने वाले सप्तम आर्य-महासम्मेलन के अवसर पर राजनीति-सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण के रूप में पढ़ा था, पुस्तकरूप में प्रकाशित कर रहे हैं। यद्यपि लेख लगभग २६ वर्ष पुराना है, पुनरपि वर्त्तमान परिस्थिति में भी यह अत्यन्त उपयोगी है।

इधर कुछ वर्षों से **'आर्यसभा'** नामक एक नई राजनीतिक सभा सक्रिय हुई है। आर्यसमाज के अनेक लोग इस सभा के अधिनायकों का साथ दे रहे हैं, परन्तु इसके सञ्चालक भारतीय राजनीति के मूल तत्त्वों से परिचित न होने के कारण अनेक निर्णय ऐसे कर बैठते हैं, जो भारतीय राजनीति की आत्मा के विपरीत होते हैं।

प्रकृत लेख में भारतीय राजनीति के उन मूल तत्त्वों की ओर ध्यान दिलाया गया है, जिनकी उपेक्षा से आर्यसमाज की हानि हो रही है या भविष्य में होगी। यदि आर्यसभा इस लेख में दर्शाए गए भारतीय राजनीति के मूल तत्त्वों के प्रकाश में अपना कार्यक्रम चलावे तो उससे कुछ लाभ की आशा हो सकती है।

आर्यसमाज में भारतीय राजनीति के तत्त्वों के वेत्ता एकमात्र स्व० पं० भगवद्दत्त जी ही थे। उनके समान न भूतकाल के और न वर्त्तमान काल के किसी विद्वान् ने भारतीय राजनीति के समस्त ग्रन्थों का सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन किया है। अतएव आर्यसमाज के नेता भारतीय राजनीति के मूल तत्त्वों से सर्वथा अपरिचित हैं। इसी कारण उनकी विचारधारा और कार्यक्रम भी भारतीय राजनीति से प्रायः विपरीत होते हैं।

आशा है, आर्यसमाज इस विषय पर गम्भीरता से विचार करेगा।

—युधिष्ठिर मीमांसक

भारतीय प्राचीन राजनीति

राजनीति को समझने के लिए, उसके जटिल सिद्धान्तों पर अपना अधिकार प्राप्त करने के लिए, और संसार आर्यवर्त्म से विचलित न हो, इसके लिए राजनीति के प्रादुर्भाव का इतिहास जानना अत्यावश्यक और अनिवार्य है। अतः प्रथम उसी पर संक्षिप्तरूप से प्रकाश डाला जाता है।

आयुर्वेदीय कायचिकित्सा के अग्निवेश तन्त्र (भारत युद्ध से २४० वर्ष पूर्व) का जो रूप, चरक-प्रति-संस्कृता (विक्रम से ३००० वष पूर्व) अपूर्व आर्षसंहिता में सम्प्रति उपलब्ध है, उसके विमान स्थान, अध्याय ३ में लिखा है—

आदिकाले·· ······व्यपगत-भय-राग-द्वेष-मोह-लोभ-क्रोध·· ······· आ·स्यपरिग्रहाश्च पुरुषाः बभूवुर् अमितायुषः। ·····भ्रश्यति तु कृत-युगे केषांचिद् अत्यादानात् सांपन्निकानां शरीरगौरवमासीत्। शरीर-गौरवाच्छ्रमः। श्रमाद् आलस्यम्। आलस्यात् संचयः। संचयात् परि-ग्रहः। परिग्रहाल्लोभः प्रादुरासीत् ॥२८॥

ततस्त्रेतायां लोभाद् अभिद्रोहः। अभिद्रोहाद् अनृतवचनम्। ······ ततस्त्रेतायां धर्मपादोऽन्तर्धानमगमत्। ·······॥२९॥

कैसा सुन्दर वर्णन है। संसारमात्र के साहित्य में प्राचीनतम कालविषयक यह ऐतिहासिक तथ्य सुरक्षित नहीं है। आर्य ऋषियों का संसार पर अतुलनीय उपकार है, जो मानवपतन के इतिहास का उन्होने निष्पक्ष-चित्र उपस्थित कर दिया है।

चरक = वैशम्पायन का अभिप्राय है—

'पहला मानव धर्मपरायण था। तत्पश्चात् आलस्य के कारण अनेक लोग संचय (Hoarding) की प्रवृत्ति वाले हो गए। संचय से ग्रहण करने की इच्छा, और परिग्रह से लोभ उत्पन्न हुआ। तब त्रेता में लोभ से द्रोह और द्रोह से असत्य-भाषण उत्पन्न हुआ।' पुराने इतिहास का यह मुंह बोलता चित्र है।

ठीक यही तथ्य अग्निवेश के सहपाठी भगवान् पराशर की ज्योतिष-संहिता में भी सुरक्षित है। यह ग्रन्थ अब उपलब्ध नहीं, पर इस के अनेक लम्बे पाठ पुराने टीका आदि ग्रन्थों में मिलते हैं। इस पराशरतन्त्र की प्रति संस्कृता ज्योतिष-संहिता में लिखा है—

पुरा खलु अपरिमित-शक्ति-प्रभा-प्रभाव-वीर्य-········धर्मसत्त्व-शुद्धतेजसः पुरुषा बभूवुः। तेषां क्रमाद् अपचीयमानसत्त्वानाम् उपचीयमानरजस्तमस्कानां लोभः प्रादुरभवत्। लोभात् परिग्रहम्[1]। परिग्रहाद् गौरवम्। गौरवाद् आलस्यम्। आलस्यात् तेजोऽन्तर्दधे।[2]

यही अनुपम ऐतिहासिक इतिवृत्त भगवान् कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास (३०५० वर्ष विक्रम से पूर्व) ने महाभारत संहिता, शान्तिपर्व, अध्याय १८६ में भृगु-भरद्वाज-संवाद के प्रसंग में सुरक्षित किया है—

इत्येते चतुरो वर्णा येषां ब्राह्मी सरस्वती।
विहिता ब्रह्मणा पूर्वं लोभात्त्वज्ञानतां गताः ॥१५॥

भीष्म उवाच

नियतस्त्वं नरश्रेष्ठ शृणु सर्वमशेषतः।
यथा राज्यं समुत्पन्नमादौ कृतयुगेऽभवत् ॥१३॥

---

१. आर्षत्वान्नपुंसकत्वम्। सं०

२. भट्टोत्पलकृता बृहत्संहिता टीका, पृ० १५।

नैव राज्यं न राजासीन् न दण्डो न च दाण्डिकः ।
धर्मेणैव प्रजाः सर्वा रक्षन्ति च परस्परम् ॥१४॥

पालयानास्तथाऽन्योन्यं नरा धर्मेण भारत ।
खेदं परममाजग्मुस्ततस्तान् मोह आविशत् ॥१५॥

ते मोहवशमापन्ना मानवा मनुजर्षभ ।
प्रतिपत्ति-विमोहाच्च धर्मस्तेषामनीनशत् ॥१६॥

नष्टायां प्रतिपत्तौ तु मोहवश्या नरास्तदा ।
लोभस्य वशमापन्नाः सर्वे भारतसत्तम ॥१७॥

अर्थात्—खेद के कारण अज्ञान, और बुद्धि में अज्ञान के कारण धर्मनाश, तथा बुद्धिनाश से लोभ का प्रारम्भ हुआ।

इन लेखों का सार यही है कि संसार में दुःख का मूल अज्ञान; संचय और लोभ से आरम्भ हुआ। प्रवृद्ध लोभ के कारण जब मानव कृच्छ्र दशा को प्राप्त हुआ, तो उसमें मात्स्यन्याय प्रवृत्त हुआ। जिस प्रकार एक मत्स्य छोटी मच्छियों को खा लेता है, उसी प्रकार सशक्त मनुष्य निर्बलों को खाने लगा। तब ऋषियों के उपदेश से राजधर्म चला, तथा वैवस्वत मनु इस सृष्टि का प्रथम राजा हुआ।

राजनीति के महापण्डित आचार्य विष्णुगुप्त कौटल्य ने लिखा है—

मात्स्यन्यायाभिभूताः प्रजा मनुं वैवस्वतं राजानं प्रचक्रिरे।

कौटल्य ने यह इतिवृत्त महाभारत शान्तिपर्व अ० ६७ से लिया—

राजा चेन्न भवेल्लोके पृथिव्यां दण्डधारकः ।
शूले मत्स्यानिवापक्ष्यन् दुर्बलान् बलवत्तराः[1] ॥१६॥

---

१. तुलना करो, मनु ७।२०॥

अराजकाः प्रजाः पूर्वं विनेशुरिति नः श्रुतम् ।
परस्परं भक्षयन्तो मत्स्या इव जले कृशाम् ॥१७॥

ताभ्यो मनुं व्यादिदेश मनुर्नाभिननन्द ताः ॥२१॥

अर्थात्—मात्स्य-न्याय की प्रवृत्ति पर वैवस्वत मनु प्रथम राजा चुना गया। मनु के न चाहने पर भी प्रजाओं ने उस पर राज्य भार डाल दिया।

मनु से पूर्व पृथु वैन्य अभिषिक्त हुआ था, पर वह समस्त भूमण्डल का राजा नहीं था। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—

पृथुर्ह वै वैन्यो मनुष्याणां प्रथमोऽभिषिषिचे।

५।३।५।४।

मनु भारत मिश्र आदि सब देशों का राजा था। मिश्र देश के पुराने ग्रन्थों में उसे मेनेस नाम से स्मरण किया है।

शतपथ ब्राह्मण में मनु के राज्य का भी स्पष्ट उल्लेख है—

मनुर्वैवस्वतो राजेत्याह। १३।४।३।३॥

शतपथ से पूर्व वाल्मीकि मुनि का भी इस विषय में साक्ष्य है—

आदिराजो मनुरिव प्रजानां परिरक्षिता।

बाल० ६।४॥

मनु ने व्यवस्था की कि संसार में अज्ञान संचय और लोभ का नाश होता रहे, तथा बली निर्बलों को न सताएं।

इतने वर्णन से आप समझ लेगें कि राज्य वही श्रेष्ठ है, जहां ज्ञान का साम्राज्य रहे, जहां अज्ञानी न्यून हो, जहां संचय की प्रवृत्ति दान और त्याग के वशीभूत रहे, तथा जहां लोभग्रस्त पुरुष थोड़े हों, तथा जहां निर्बल भी आराम और सुख का जीवन व्यतीत करें, और जहां चोरी डाका अपि च बलात्कार आदि कुछ न हो। अस्तु।

इस प्रकार वैवस्वत मनु के काल से भारतीय राजशास्त्र, अथवा दण्डशास्त्र तथा अर्थशास्त्र का प्रयोग वृद्धि को प्राप्त हुआ। राजशास्त्र का मूल वेद में है। भगवान् ब्रह्मा ने वेद से आकृष्ट करके त्रिवर्ग का मूलशास्त्र एक लाख अध्याय में दिया। उसका उत्तरोत्तर संक्षेप होता गया। वैवस्वत मनु ने उस परम्परागत शास्त्र का विस्तृत प्रयोग आरम्भ किया। मनु के पश्चात् वह शास्त्र अधिक संक्षिप्त होता गया। श्री भगवान् ब्रह्मा जी के काल से भारत-युद्ध-काल तक इस राजनीति-शास्त्र के निम्नलिखित चौबीस प्रधान उपदेष्टा हुए—

१. ब्रह्मा
२. स्वायंभुव मनु
३. प्राचेतस मनु
४. वैवस्वत मनु
५. विशालाक्ष=शिव
६. इन्द्र=सहस्राक्ष
७. बृहस्पति=सुरगुरु
८. काव्य उशना=शुक्र
९. नारद=देवर्षि=पिशुन
१०. बुध=राजपुत्र
११. सुधन्वा आंगिरस
१२. मरुत आविक्षित
१३. भरद्वाज बार्हस्पत्य
१४. पराशर
१५. गर्ग
१६. गौरशिरा
१७. भागुरि
१८. भीष्म=कौणपदन्त
१९. द्रोण=भारद्वाज
२०. कृष्ण देवकीपुत्र
२१. उद्धव मन्त्री=वातव्याधि
२२. विदुर
२३. शारुब्रव्य
२४. वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन

इनके अतिरिक्त आठ धर्मसूत्रकारों ने भी न्यूनाधिक प्रसंगवश राजशास्त्र का उपदेश दिया। इनमें से पहले तीन का उपदेश कुछ विस्तार से है—

१. हारीत
२. देवल
३. शङ्खलिखित
४. गौतम
५. वसिष्ठ
६. आपस्तम्ब
७. बोधायन
८. शौनक (राजधर्म में)

इनमें अन्तिम तीन भारत युद्ध के २०० वर्ष पश्चात् अपने धर्म-सूत्र लिख रहे थे। इनके अनन्तर निम्नलिखित छः आचार्यों और पण्डितों ने राजधर्म का आर्ष उपदेश संक्षिप्त किया—

१. आम्भीय २. चारायण
३. विष्णुगुप्त कौटल्य ४. विष्णु शर्मा
५. कामन्दक ६. सोमदेव सूरि

इन अड़तीस महर्षियों मुनियों आचार्यों और पण्डितों के ज्ञान का जो अंश सम्प्रति उपलब्ध है, उसमें पारङ्गत व्यक्ति ही राजनीति के विषय में कुछ कह सकता है।

अब संसार के इतर देशों की व्यवस्था सुनिए। पहले सारे संसार में स्वायंभुव मनु-प्रोक्त राजशास्त्र तथा वैवस्वत मनु द्वारा उसका रूपान्तर ही अधिकतर प्रयुक्त होता था। पुनः ब्राह्मणों के अभाव में योरुप और मिश्र आदि देश विद्याहीन हुए। तब कालडिया में हमूरब्बी का, और इबरानी लोगों में मूसा का नियम प्रचलित हुआ। इन दोनों के नियम भी मनु के नियमों का विकृत और अधूरा रूप थे।

यूनान अथवा यवन देश में सब से प्रथम अफलातून (Plateau) ने राजशास्त्र का ग्रन्थ लिखा। इसके विषय में इङ्गलैण्ड के अध्यापक ई० जे० अर्विक ने एक खोज पूर्ण ग्रन्थ सन् १६२० में लण्डन से प्रकाशित कराया। उसका नाम है—

The Message of Plateau : A Reinterpretation of the republic.

इस पुस्तक के आरम्भ में योग्य लेखक लिखता है—

The republic is based largely upon ancient Indian social philosophy.'

अर्थात्—अफलातून का 'जनतन्त्रराज्य ग्रन्थ' अधिकांश में प्राचीन भारतीय वर्णाश्रम की मर्यादा पर आश्रित है।

जिस वर्णाश्रम को आज लोग आमूलचूल मिटा देना चाहते हैं, उस पर अफलातून के ग्रन्थ का आधार है। सत्य है, मूर्ख संसार अपनी जड़ों को काट रहा है।

इससे स्पष्ट सिद्ध होती है कि योरुप की मुहुर्मुहुः घोषित गणतन्त्र राज्यप्रणाली का उद्गम भी आर्य संस्कृति से हुआ है।

प्रश्न होता है, क्या योरुप अथवा अमेरिका का कथित उन्नत मस्तिष्क मानव-कल्याण के लिए राजशास्त्रविषयक कोई उपयोगी सरल तथा उत्कृष्ट पद्धति निकाल सका है, वा नहीं ? श्रोतृवृन्द ! इसका उत्तर हमारे अगले कथन में मिलेगा।

परन्तु आर्य राजनीति को उसके स्वच्छ रूप में, उसके निर्मल कलेवर में समझने के लिए निम्नलिखित कतिपय मूल तत्वों और सत्य पर आश्रित वज्र सिद्धान्तों का ज्ञान परमावश्यक है। इसलिए पहले वे मूल सिद्धान्त लिखे जाते हैं—

(१) योरुप के वर्तमान सिद्धान्त में मत्त (religion) और अध्यात्म-विहीन (secular) को पृथक् मान लिया गया है। योरुप के प्रायः विचारक, जिन पर विकासमत की पूरी छाप है, आत्मा का तथा दैवी ज्ञान का अस्तित्व नहीं मानते। वे मनुष्यकृति में ही विश्वास रखते हैं। इसके ठीक विपरीत भारत के इतिहास में मोक्षशास्त्र को त्रिवर्गशास्त्र से पृथक् तो माना है, पर दोनों में आत्मिकभावना का पूर्ण समावेश स्वीकार किया है। दोनों का उद्गम वेद से, और दैवी है। बौद्ध और जैन भी इनका उद्गम मनुष्य से न मानकर दैवी अर्थात् सर्वज्ञ तीर्थङ्करों द्वारा मानते हैं।

इसलिए यह सत्य है कि मानव-जीवन के चार उद्देश्यों में से धर्म अर्थ और काम के त्रिवर्ग को मोक्ष से पृथक् मानकर भी, हम उस

अर्थ मे सैक्यूलर (secular) नहीं हैं, जिस अर्थ में पण्डित जवाहर-लाल जी हमें सैक्यूलर बनाना चाहते हैं। हमारा ईश्वर में, और वेद के अनादित्व में पूर्ण विश्वास है। और राजनीति वेद से चली, तथा ऋषियों द्वारा इसका स्पष्टीकरण हुआ, इस सत्य ऐतिहासिक तथ्य को परे फेंक कर हम असत्य का मार्ग ग्रहण नहीं कर सकते। हम मनुष्य-कर्तृत्व की उत्कृष्टता में विश्वास नहीं रखते।

यत् खलु शब्द आह तद् अस्माकं प्रमाणम्

—व्याकरण महाभाष्य।

हम शब्दप्रमाण के माननेवाले हैं।

(२) इसके साथ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि कुरान और बाइबिल के समान वेद नहीं। वेद आदि सृष्टि में हुआ है, और वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है। वेद के मन्त्र उपदेश देते हैं—मोक्ष और राज-नीति का। एक लाख अध्यायों में आदि त्रिवर्गशास्त्र का ज्ञान देने वाला ब्रह्मा, जो कुरान और बाइबिल में आदम अथवा आदि देव के नाम से प्रसिद्ध है, तथा राजशास्त्र के महान् आचार्य इन्द्र, बृहस्पति, शुक्र और नारद, तथा धर्म अथवा कानून का एक लाख श्लोकों में विधान करनेवाला स्वायंभुव मनु, सब मुक्तकण्ठ से एक ही ध्वनि करते हैं—

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।—मनु

अर्थात्—वेद सम्पूर्ण कानून का मूल है।

कौटल्य भी विद्याओं में त्रयी का प्रधान स्थान मानता है। बाइ-बिल आदि अधिकतर भक्ति और पूजा का मार्ग बताते हैं। अतः जब कोई वेद-विश्वासी आर्यराज्य की घोषणा करता है, तो उसे Com-munal अथवा मतवादी नहीं कहा जा सकता। वह सम्पूर्ण विद्याओं के भण्डार वेद की शुद्ध राज्य-पद्धति का समर्थक है। हां उसका

आधार भ्रान्तिपूर्ण मानव-बुद्धि पर नहीं, ईश्वर के ज्ञान और ऋषियों के व्याख्यान पर है।

राजशास्त्र के पूर्वोक्त उपदेष्टा ऋषियों ने राज्य, राष्ट्र, प्रजा, दण्ड, धन-विभाजन, भूमि, कर, न्याय और विधान आदि के सम्पूर्ण सिद्धान्त इस निर्मलरूप में दिए हैं कि उनकी तुलना प्लैटो, बिस्मार्क, डिजरेली, ग्लेडस्टन, कार्लमार्क्स, लैनिन, हिटलर, स्टैलिन, चर्चिल, रोजवल्ट, ट्रूमन अथवा जवाहरलाल आदि अणुमात्र भी नहीं कर सकते। अतः उन ऋषियों के राजशास्त्र के सिद्धान्तों द्वारा संसार को राग-द्वेष रहित करके सुखी बनाने का प्रयास करनेवाले आर्य अथवा विकृत शब्द हिन्दू से पुकारे जानेवाले श्रद्धावान् लोगों को Communal कहना अनुचित है, अज्ञान का फल है, नहीं-नहीं महान् पाप है। वस्तुतः, संसारमात्र में केवल आर्य ही कम्यूनल नहीं हैं, शेष दूसरे सारे लोग जिन्होंने अधूरे विकृत रागद्वेषयुक्त मनुष्य-निर्मित आधारों पर राजशास्त्र के सिद्धान्त अथवा विधान बनाकर अपनी-अपनी Communities (समूह) बनाई हैं, कम्यूनल हैं। आर्यराज्य में घृणा और वैमनस्य का लेश नहीं है।

जिस प्रकार कम्यूनिस्ट बनने वालों को ईश्वर आत्मा पुनर्जन्म और कर्मफल के अस्तित्व के विश्वास को तिलाञ्जलि देनी पड़ती है, तथा जिस प्रकार कम्यूनिस्ट लोग कार्लमार्क्स को ज्ञान का परम पुञ्ज मानते हैं अपिच जिस प्रकार सोशलिस्ट बनने वाले को धन के बटवारे के सिद्धान्त-विशेष मानने पड़ते हैं और पूंजीपति और मदूजर रूपी अति घृणित शब्दों द्वारा उद्घोषित, वर्तमान-युगीन सदोषमत स्वीकार करने पड़ते हैं, अपरं च जिस प्रकार कांग्रेस में प्रवेश करने वालों को संग्रथित संस्कृति (Composite Culture) के दूषित मत में विश्वास करना पड़ता है, तथा वेद बाइबिल और कुरान वर्णित आदि-मनुष्य के जन्मविषयक सिद्धान्त का विश्वास त्याग करके श्री

महात्मा गांधी जी द्वारा स्वीकृत विकासमत अपनाना पड़ता है, उसी प्रकार आर्य-राजनीति में विचार करने वाले को वेद को ज्ञान का मूल और सर्वाङ्गपूर्ण उद्गम का मूल मानना पड़ता है, जो तथ्य स्वतः-सिद्ध, इतिहास-सिद्ध और तर्कसिद्ध है, तथा जिस सिद्धान्त के सम्मुख जर्मन लेखकों का मिथ्या भाषा-मत जर्जरीभूत हो रहा है, तो इसमें आर्य अथवा हिन्दू का कोई दोष नहीं। वह उसी प्रकार के वैज्ञानिक मार्ग का पुजारी है, जिस प्रकार के वैज्ञानिक मार्ग पर एक वनस्पतिशास्त्र-वेत्ता अथवा एक रसायनशास्त्रवेत्ता चल रहा है।

इस कथन में अत्युक्ति का लेशमात्र भी नहीं कि राजनीति के क्षेत्र में वास्तविक अधिकार ही आर्य का है, और शेष लोग तो इस विषय में बालक के समान हैं। संसार को आर्यशास्त्र से सीखने की आज भी आवश्यकता है। इस सिद्धान्त के सर्व-विदित न होने का दुःख है, पर इस विषय में दोष अपना है। हमने अभी तक एतद्विषयक उत्कृष्ट साहित्य संसार के सामने नहीं धरा। **आर्यसमाज का सब धन और शक्ति अति छोटे कामों में लगी है।**

(३) तीसरा मूल तत्त्व है—**ह्रास-सिद्धान्त** विषयक। मानव जाति काल के सहस्रों वर्ष के महान् चक्र में, सामूहिकरूप से उन्नति की ओर नहीं गई। यह ह्रास और अवनति की ओर मुख किए है। विज्ञान के जिन महान् आविष्कारों पर वर्तमान नास्तिक संसार मुग्ध है, वे मानव के लिए कल्याणकारी सिद्ध हुए तथा होगें वा नहीं, इस का निर्णय भावी संसार करेगा। अतः दस-बीस आविष्कारों को ही जीवन-उन्नति का सर्व-सर्वा मानना, सब सब कुछ नहीं है। भगवान् मनु ने सहस्रों वर्ष पूर्व कह दिया था कि राष्ट्रों में महायन्त्रों का प्रवर्तन पतन का कारण अर्थात् उपपातक होता है—

सर्वाकरेष्वधिकारो महायन्त्रप्रवर्तनम्।
हिंसौषधीनां स्त्र्याजीवोऽभिचारो मूलकर्म च ॥११।६२॥

इसलिए ज्ञात होता है कि महायन्त्रों को जानते हुए भी ऋषियों ने इनका अधिक प्रचार मनुष्य के कल्याण का हेतु नहीं माना। अतः इन पर उन्होंने नियन्त्रण कर दिया। महायन्त्रों से पाश्चात्य संसार को जो सुख हुआ है,उसका परिणाम कुछ ही वर्षों में निकलनेवाला है।

राजनीति के क्षेत्र में भी जो उन्नत दशा पूर्व समयों में थी, उसका सहस्रांश भी अब नहीं है। मैं आपको रामराज्य के विषय की कतिपय यथार्थ घटनाएं सुनाता हूं—

विधवा यस्य विषये नानाथाः काश्चनाभवन् ।।४७।।

नित्यं सुभिक्षमेवासीद् रामे राज्यं प्रशासति ।।४८।।

अदंशमशका देशा नष्टव्यालसरीसृपाः ।
नान्योन्येन विवादोऽभूत् स्त्रीणामपि कुतो नृणाम् ।
धर्मनित्याः प्रजाश्चासन् रामे राज्यं प्रशासति ।।५१।।

सर्वा द्रोणदुघा गावो रामे राज्यं प्रशासति ।।५२।।

महाभारत शान्ति पर्व अ० २९ ।

अर्थात्—रामराज्य में विधवा और अनाथ नहीं थे। खाना-पीना सदा सुलभ था। सम्पूर्ण देश में मच्छर, सिंह, सर्प, कानखजूरा और बिच्छू आदि न थे। पर्वतों के निर्जन स्थानों में भले ही हों। किसी स्त्री का दूसरी स्त्री से कभी झगड़ा नहीं होता था, पुरुषों के झगड़े की तो बात ही क्या। प्रजा धर्म में स्थिर थी। अधर्मी नास्तिक तब न थे। प्रत्येक गौ न्यून से न्यून ३२ सेर दूध देती थी।

पौरव कुल के चक्रवर्ती सुहोत्र के राज्य में निर्धन से निर्धन पुरुष का बालक सोने के हाथी-घोड़े रूपी खिलौनों से खेलता था। महाभारत शान्तिपर्व में लिखा है—

यस्मै हिरण्यं ववृषे मघवा परिवत्सरम् । २९।३२।।

मैं कल्पित बातें नहीं कह रहा। सत्य इतिहास के ये नग्न चित्र हैं। भला कौनसा कम्युनिस्ट अथवा सोशलिस्ट राज्य है, जो क्रियात्मक रूप में इनके समीप भी पहुंच सकता है। अतः यदि इस प्रकार के सुखी आर्य-राज्य के निर्माण का हम यत्न करें, तो इसमें किसको आपत्ति हो सकती है? राज्य-व्यवस्था में ऋषियों का सिद्धान्त अजेय है। रूस और अमरीका की डिण्डीभि निःसार है। वे कम्यूनल हैं, हम प्राणीमात्र के हैं।

(४) योरुप और अमरीका के चतुर लोगों ने एक घोषध्वनि सारे संसार में प्रचलित कर दी है। वह ध्वनि प्रगतिशीलता (Progressivness) की ध्वनि है। भारत में भी इसका बहुत बोल-बाला हो रहा है। सन् १९३६ में भारत के लेखकों की एक सभा लखनऊ में में जुटी। मुन्शी प्रेमचन्द जी, जिनका झुकाव पहले कभी आर्यसमाज की ओर था, उसके प्रधान थे। उन्होंने निर्णय किया कि भावी में रचे जानेवाले सब ग्रन्थों में प्रगतिशीलता का संदेश होगा, और रूढ़िवाद का प्रतिरोध। फलतः आज जो भी ग्रन्थ निकलता है, उसमें प्रगतिशीलता का नाद है।

आर्यसमाज ने इस अज्ञान के प्रसार का विरोध नहीं किया। आर्यसमाज की वेदी से हमने बहुधा व्याख्यान सुने, जिनमें प्रगतिशीलता की श्लाघा थी। आर्यसमाज में प्रायः केवल अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग अधिक हैं, उन्होंने इस ध्वनि के भाव को नहीं समझा।

परिणाम-स्वरूप ऋषि दयानन्द सरस्वती, पं० गुरुदत्त, पं० लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, तथा महात्मा हंसराज का सारा परिश्रम वृथा हो गया। जो मनुस्मृति ऋषि की दृष्टि में वेदों के पश्चात् एक महा-प्रामाणिक ग्रन्थ था, जिसके सुन्दर वचन ऋषि के ग्रन्थों में भरे पड़े हैं, वह पुराना ग्रन्थ "रूढ़िवाद" का ग्रन्थ कहा जाने लगा। आज आर्यसमाज में बिरले ही इस ग्रन्थ का स्वाध्याय करते हैं।

भला जिस युग में सोने, उठने, बैठने, चलने, खाने, विद्या और तप आदि के नियम ही नहीं रहे, उसमें प्रगति कैसी ?

मुनि आपस्तम्ब ने अपने धर्मसूत्र (१।२।५।४) में लिखा है—

तस्माद् ऋषयोऽवरेषु न जायन्ते। नियमातिक्रमात्।

अब ऋषि नहीं हो रहे, यम-नियमों का उच्छेद हो जाने से। यह तो दैवी कृपा थी कि नियम आदि व्रतों से पूर्ण सुसज्जित एक ऋषि ५००० वर्ष के पश्चात् भारत में उत्पन्न हुआ। केवल अंग्रेजी पढ़े लोगों को हमने कहते सुना है कि हर्बर्ट स्पैंसर ऋषि था, डारविन ऋषि था, टण्डन जी राजर्षि हैं। यह तो ऋषि शब्द के साथ उपहास करना है। टण्डन जी मेरे पूज्य हैं, मैं उनका आदर करता हूं, पर वे ऋषि पद के योग्य नहीं हैं। अस्तु।

प्रगतिशीलता का अज्ञान-युक्त वाद संसार के अनेक दुःखों का, और राजनीति के विकृत होने का कारण है। सांख्य के कपिल, आसुरि, पंचशिख, देवल, हारोत के गम्भीर विशाल तन्त्र; योग के हिरण्यगर्भ आदि के एक-एक लाख श्लोक के ग्रन्थ; व्याकरण के बृहस्पति, इन्द्र, भरद्वाज और शाकटायन के महान ग्रन्थ; आयुर्वेद के अश्वियों, इन्द्र, आत्रेय, भरद्वाज, धन्वन्तरि, औरभ्र, अग्निवेश, भोज, विश्वामित्र आदि के महातन्त्र; ज्योतिष के ब्रह्म-प्रोक्त गणित; कश्यप, पराशर और गर्ग आदि के अति विस्तृत तन्त्र; इतिहास में रामायण और महाभारत के विपुल आख्यान; यन्त्रसूत्रों में विश्वकर्म, नग्नजित् और वासुदेव कृष्ण आदि के आश्चर्योत्पादक शास्त्र; इनके अतिरिक्त कृषि वाणिज्य तथा जलविद्या सूत्रादि, कहां तक लिखें, इनकी तुलना के ग्रन्थ आज संसार में नहीं हैं। यदि सांख्य-ज्ञान पुनः प्रचलित हो गया, तो योरुप का विकासमत संसार से उठ जाएगा। सांख्य के विषय में अमरीका का संस्कृताध्यापक ए० डबलिऊ राईडर लिखता है—

Nearer to the truth than any philosophy Western or Eastern.

अर्थात्—पूर्व और पश्चिम के फिलासफी के सब मतों में से सांख्य का वाद सत्य के अधिक निकट है।

हमारा इस पर इतना ही कथन है कि यदि राईडर किसी श्रेष्ठ गुरु से पढ़ा होता, तो वह सत्य को अधिक जान सकता।

अब पाठकवृन्द! सोच लीजिए कि प्रगतिशीलता के राग से संसार कितने दुःख में पड़ा है? इस प्रगतिशीलता का अथवा 'मार्क्स मत के सहोदर भाई' का प्रभाव राजनीति के क्षेत्र में भी पड़ा है। इसी की रट संसार के बड़े-बड़े कर्णधार सदा लगाते हैं, और जनता को दुःख में डुबा रहे हैं।

(५) प्रगतिशीलता के नाद ने भारत में एक और तरंग उत्पन्न की है। यह तरंग है (composite culture) की। लगभग १०० वर्ष पूर्व मजहब के क्षेत्र में ब्रह्मसमाज के नेताओं ने, मेरा अभिप्राय राममोहन राय के शिष्य मण्डल से है, यही ध्वनि पैदा की थी। आज राजनैतिक क्षेत्र में कांग्रेस के द्वारा यही राग अलापा जा रहा है। इसी संग्रथित संस्कृति के संस्कार के कारण पं० जवाहरलाल जी ने लिखा है—

Behind the Rigveda itself lay ages of civilised existence and thought, during which the Indus Valley and the Mesopotamian and other civilisations had grown.

अर्थात्—ऋग्वेद से पूर्व सभ्यता और विचार के अनेक युग थे। उन में सिन्धु घाटी की सभ्यता और मैसोपोटेमिया आदि की सभ्यताएं वृद्धि को प्राप्त हुई थीं।

यह प्रमाण-शून्य कथन कभी न होता, यदि संग्रथित-संस्कृति का तर्कहीन विचार संसार पर ठोसा न जाता। इसी विचार के प्रभाव के कारण श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी जी द्वारा प्रकाशित इतिहास में लिखा है—

It has been generally admitted, particularly after a study of both the basis of Dravidian and Arya culture through language and through institutions, that the Dravidians contributed a great many elements of paramount importance in the evolution of Hindu civilisation, which is after all (like all other great civilisations) a composite creation.

अर्थात्—आर्य संस्कृति एक मिश्रण का परिणाम है। मुंशी जी के ग्रन्थ में वेदकाल ईसा से लगभग १५०० पूर्व माना गया है।

अभी कुछ समय पूर्व कलकत्ता विश्वविद्यालय के अध्यापक श्री सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय ने बंगाल ऐशियाटिक सोसायटी के जर्नल सन् १९५०, भाग १६, संख्या १ पृ० ७३ से इस विषय पर एक लेख लिखा—

Ancient Indian Civilisation—A Composite Thing.

इसमें उन्होंने सिद्ध किया है कि वेद में दूसरी भाषाओं के शब्द और दूसरी संस्कृतियों के प्रभाव हैं।

और सुनिए—एक ग्रन्थ अध्यापक कर्मस्कर लिखित Religions of India, सन् १९५० में प्रकाशित हुआ है। उसमें श्री आर. आर. दिवाकरजी ने प्राक्कथन लिखा है कि वेद से पूर्व अन्य संस्कृतियां थीं, और कोई prehistoric काल था।

अब राजनीति में इस मत का समावेश बड़े वेग से हो रहा है। इस मत के प्रसार में रूस, अमरीका, सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट और कांग्रेस के नेता सभी सम्मिलित हैं।

आर्यसमाज की सभाओं ने तथा सार्वदेशिक सभा ने यह निर्णय नहीं किया कि इस मत का प्रसार करने वालों से उनका सहयोग रह सकता है या नहीं ? इस एक मत के प्रसार से, और इस मत का प्रचार करने वाली कांग्रेस को सहयोग देने से आर्यसमाज का समूल उच्छेद हो जाएगा।

आर्यसिद्धांत निश्चित है कि संस्कृति एक है, और वह वेद की संस्कृति है। शेष कथनमात्र संस्कृतियां हैं, और आर्यसंस्कृति का स्वल्पाधिक विकारमात्र हैं। अतः आर्य राजनीति विद्या और ज्ञान के बल पर आर्यसंस्कृति के लिए खड़ी होगी।

(६) विधान ऋषिकृत हैं मनुष्यकृत नहीं। ऋषि परमयोगी तथा त्रिकाल व्यवहार के जानने वाले होते हैं। ऋषि दयानन्द सरस्वती जी ने भी सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखा है—

जगदीश्वर, जिससे सब योगी लोग इन सब भूत भविष्यत् वर्तमान व्यवहारों को जानते······ ।

यही सत्य आयुर्वेद की चरक संहिता सूत्रस्थान अ० ११ में प्रदर्शित है—

रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तास्तपोज्ञानबलेन ये।
येषां त्रिकालममलं ज्ञानमव्याहतं सदा ॥१८॥
आप्ताः शिष्टा विबुद्धास्ते तेषां वाक्यमसंशयम् ।
सत्यं, वक्ष्यन्ति ते कस्माद् असत्यं नीरजस्तमाः ॥१९॥

अर्थात्—ऋषि लोग नीरजस्तम, त्रिकाल ज्ञानवाले, निर्मल ज्ञान-युक्त, तथा अव्याहत-ज्ञान होते हैं। उनका वचन कभी असत्य नहीं होता। मनुष्य रज और तमोगुण युक्त होते हैं। वे असत्य में फंसे रहते हैं। उनका ज्ञान अव्याहत और त्रिकाल का नहीं होता।

अतः आर्यराजनीति में दण्ड-विधान के अथवा न्याय-विधान (Constitution) के निर्माता मनुष्य नहीं होते, ऋषि होते हैं। मनुष्य-निर्मित विधान व्याहत-ज्ञानवालों का होने से चौथे दिन बदलता है। फ्रांस का विधान सदा ही बनता है। अमरीका और इंग्लेण्ड में विधान बहुधा परिवर्तित होता रहता है। भारत का नया विधान उन्हीं पर कैंची का परिणाम है। मनुष्य-निर्मित विधान पूर्ण उपादेय और सुखकारी नहीं होता। और जिन मनुष्यों को भूतकाल का ज्ञान नहीं, अथवा जिन्होंने भारत के कल्पित इतिहास पढ़े हों, उनका भावी निर्माण अवश्य सदोष होगा।

संसार में बौद्ध ईसाई आदि मतवाले अपने मार्गप्रदर्शकों को Prophet अर्थात् भविष्यद्वक्ता कहते हैं। वे उनको ईश्वर का संदेश लाने वाला कहते हैं। उन्होंने भूत का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं कहा। कार्लमार्क्स आदि तो उनकी अपेक्षा लाखों गुणा नीचे हैं। मार्क्स आत्मा को अमर नहीं मानता। उसका भूत का लगभग सब ज्ञान मिथ्या है। अतः इन सबसे ऋषि सर्वथा पृथक् हैं। इसका एक कारण और है। वह है—भाषा-विषयक। उस पर आगे प्रकाश डाला जाएगा।

सोचिए कोई चोर अपने लिए दण्ड स्थिर नहीं करता। इसी प्रकार विधान बनाने वाला दल अपने बनाए विधान में अपने बचाव के मार्ग सदा निकालता है, यथार्थ विधान ऋषि ही दे गए हैं। वे देश काल और दल के बन्धनों से मुक्त थे। उनके विधान में जितना परिवर्तन किया जा रहा है, संसार उतना ही दुःख में पड़ रहा है।

आर्य राजनीति का विधान स्वयंभुव मनु, वैवस्वत मनु, नारद और बृहस्पति आदि बना गए हैं, उसे श्री अम्बेदकर जी अथवा अन्य अधूरा कानून पढ़े लोग नहीं बना सकते।

एक आश्चर्य की बात देखिए। न्याय में व्यवहार चार प्रकार का माना है। यथा नारद कहता है—

धर्मश्च व्यवहारश्च चरित्रं राजशासनम् ।

अर्थात्—ऋषिप्रणीत मूल विधान, व्यवहार महान् न्यायाधीशों के निर्णय चरित्र देशव्यवहार (Costomary law) तथा राजशासन, मूल धर्म के अनुसार राज-आज्ञा।

इन सब में धर्म प्रधान है। उसी पर शेष सब आश्रित हैं। उस धर्म का शासक नारद पुनः कहता है—साक्षीकर्म में कौन नहीं बुलाए जा सकते, इस विषय में आर्ष-विधान है—

गवां प्रचारे गोपालाः सस्यकाले कृषीबलाः ।
शिल्पिनश्चापि तत्काले आयुधीयाश्च विग्रहे ॥

इसी को मुनि कात्यायन ने दूसरे शब्दों में कहा है—

न कर्षको बीजकाले सेनाकाले तु सैनिकः ।
उद्युक्तः कर्षकस्सस्ये तोयस्यागमने तथा ॥

पूर्वोक्त विधान में खेती बोने अथवा काटने वाले भी कहे गए हैं। कोई कचहरी खेती बोने, खेती को पानी देने और काटने के समय किसानों को साक्ष्य के लिए नहीं बुला सकती।

ऋषियों की दृष्टि कितनी दीर्घ थी। वह दृष्टि देश-काल की सीमाओं से ऊपर थी। संसार ने इस विषय पर अभी तक पूरा ध्यान नहीं दिया। गत दस बारह वर्ष में इस नियम की ओर पश्चिम के कानून बनाने वालों का थोड़ा सा ध्यान गया है।

मेरा अभिप्राय यह है कि हमारे पास पूर्णविधान विद्यमान है। हम उसी का सदुपयोग करके सुखी हो सकते हैं।

इसी दृष्टि में मैं हिन्दू कोड का घोर विरोधी रहा हूं। आर्य विधान में सब आवश्यक बातें पहले ही समाविष्ट हैं। हिन्दू कोड के उपस्थित करने वालों ने उन पर अणुमात्र ध्यान नहीं दिया। उन्हें तो विवाह होना कहां चाहिए, इसका भी यथार्थ ज्ञान नहीं है। धर्म सूत्रकार लिखते हैं– जो माता-पिता अपनी कन्या अथवा पुत्र के दोष दूसरे पक्ष को बताये बिना उन्हें विवाह देते हैं, भविष्य में उन दोषों के कारण यदि दम्पति में कलह रहे, और वे विच्छेद के इच्छुक हों, तो पहले माता-पिता को कठोर दण्ड देना चाहिए। और आजकल के पढ़े लिखे जो स्वेच्छाचारी रूप से विवाह करते हैं, उन्हें तो भयङ्कर दण्ड होना चाहिए।

वरो दोषमनाख्याय पाणिं गृह्णाति यो नरः।
याचनं वा प्रकुर्वीत तद्दत्तं नाप्नुयात् सुतः॥
कन्यादोषेऽप्ययं धर्मो दाता दण्ड्यो वरस्तथा।

कात्यायन।

विचार लीजिए कि इन नियमों की उपस्थिति में कितनी समस्याएं अनायास सुलझ जाएंगी।

एक और विधान भी सुनिए। भारत सरकार के प्राणी विभाग के अध्यक्ष श्री सुन्दरलाल होरा D., SC. F. R. S. E. अपने एक अभी-अभी प्रकाशित लेख में लिखते हैं—

On a very careful consideration of the whole matter, I feel that the Indian Union cannot, under the present circumstances, think of any better legisla ive measures for the conservation of its land fisheries than to enact the laws promulgated by the good king Ashoka.

अर्थात्—भारत सरकार को भारत-भूमि की मक्खियों के विषय में महाराज अशोक के नियमों का अनुसरण करना चाहिए।

हमारा इतना कथन है कि अशोक ने ये नियम पुराने विधान से लेकर रखे हैं। पुराने विधान में ये और अधिक अच्छे थे। कौटल्य मनु और बृहस्पति आदि में इनका विस्तृत वर्णन है। इस प्रकार अधिकांश पुरातन विधान, जिसकी अब भी महती आवश्यकता है, भारत में पुनः लागू होना चाहिए।

वर्तमानरूप से विधान के बनाए जाने में एक भयंकर दोष यह भी है कि यह विधान पहले अंग्रेजी में बनता है। स्पष्ट है कि वह प्रायः योरुप और अमरीका के विचारों का उच्छिष्टमात्र होता है। उस उच्छिष्ट को आर्य जनता के शिर बलात् मढ़ना भारत में से भारतीय संस्कृति के उन्मूलन का एक प्रच्छन्न प्रयत्न है। शास्त्र में श्रद्धा को दूर करना इसका ध्येय है। कहां शास्त्र का परम प्रामाण्य, और कहां महानिकृष्ट मार्ग ?

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ। गीता।

आप ध्यान रखें कि आर्य राजनीति के अनुसार विधान बनाया नहीं जाता, चलाया जाता है। मैं समझता हूं कि इस भूमि में यह यत्न सफल नहीं होगा।

(७) गो-ब्राह्मण अथवा जनसाधारण (Common man)। संसार का आधार, इस लोक में मानवयात्रा के सुगम मार्ग का आधार, जनसाधारण पर रहा है। साधारण मनुष्य धर्मपूर्वक चले, वह सुख में रहे, उसकी प्रजा श्रेष्ठ गुणों वाली बने, उसका दुःख राष्ट्र का दुःख हो, इसका पूर्ण प्रबन्ध और सम्यक्-चिन्तन ऋषियों ने पहले ही कर दिया है। परन्तु संसार का वास्तविक आधार तो गो-ब्राह्मण पर है।

गो से नीरोगता देने वाले श्रेष्ठ भोजनों की प्राप्ति और अन्नों का लाभ होता है। वर्तमान ट्रैक्टर्स और खादें अन्न में विषों का अंश

अधिक करके रोगों को फैलाने वाली बन रही हैं। पश्चिम के वैज्ञानिक अब इस सत्य का अनुभव करने लगे हैं। लौटकर वे ऋषि-सिद्धान्त की ओर ही आने लगे हैं।

ब्राह्मण मानवता का आदर्श है। वह अतिमानुष (Super man) है। जिस ब्राह्मण के पास छः मास का खाद्य पदार्थ है, वह एक मास का पाथेय रखने वाले से छोटा है। एक मास के लिए जीवन-निर्वाह की सामग्री रखनेवाला तीन दिन की सामग्री रखने वाले से छोटा है। और तीन दिन की सामग्री रखने वाला एक दिन की सामग्री रखने वाले से छोटा है। प्राणियों के परम मित्र भगवान् मनु का यही अभिप्राय है—

कुशूलधान्यको वा स्यात् कुम्भीधान्यक एव वा।
त्र्यहैहिको वापि भवेद् अश्वस्तनिक एव वा ।।७।।
चतुर्णामपि चैतेषां द्विजानां गृहमेधिनाम्।
ज्यायान् परः परो ज्ञेयो धर्मतो लोकजित्तमः ।।८।।

ऐसे ब्राह्मण ने धर्म के बल से सब लोक जीत लिए हैं। सुतरां सबसे थोड़ा रखना सब से बड़ा बनना है। अतः संचय करने वाले का hoarder का स्थान बहुत नीचा है। भिक्षु, संन्यासी सब से ऊंचा है। देवल और याज्ञवल्क्य तथा पञ्चशिख और आसुरि, सब ऐसे ही थे। मार्क्स में अथवा बर्नार्डशा में ये गुण नहीं थे। भारत में तो ऐश्वर्य में रहने वाले अनेक शूर राजाओं ने भी धन के प्रति वासना का त्याग कर दिया था। सम्राट् जनक कहते हैं—

मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति किंचन ।।१।।

महा० शान्ति पर्व १७।

जब उच्च ब्राह्मण देश में रहते हैं, तो जनता के सामने श्रेष्ठ आदर्श स्थिर रहते हैं। भारतीय ब्राह्मण के विषय में चीनी यात्री ह्यूनसांग लिखता है—

The families of India are divided into castes the Brahamans particulary on account of their purity & nobility. Tradition has so hallawed the name of this tribe that there is on question of place, but the people generally speak of India as the country of the Brahmans.

अर्थात्—भारत के परिवार वर्णों में विभक्त हैं। उन में से पवित्रता और उच्चता में ब्राह्मण विशिष्ट हैं। परम्परा में इस वर्ण का नाम इतना उज्ज्वल है कि देश-भेद का प्रश्न न करके, लोग सारे भारत देश को ब्राह्मणों का देश कहते हैं।

जब इस देश में लाखों करोड़ों ब्राह्मण थे, तो यहां कृष्ण-व्यापार (=चोरबाजारी) नहीं होता था, अथवा अत्यल्प होता था।

धन अर्जन करने वाले वर्ग बहुत अधिक पवित्र थे। आज ब्राह्मण के अभाव में जीवन की स्वच्छता संसार से दूर भाग रही है। राजा भी ठीक मार्ग पर नहीं चल रहा। उस पर नियन्त्रण रखने वाली ब्राह्मणशक्ति आज नहीं है। इसीलिए वेद में कहा है—

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च उभे भवत ओदनम्।

अर्थात्—जब क्षात्र सत्ता के साथ ब्राह्मण सत्ता विद्यमान रहती हैं, तो राज्य का निर्माण सुचारु रूप से होता रहता है—

इसलिए सूत्रकार शङ्खलिखित लिखते हैं—

कोशपरिपालनं गोब्राह्मण-परित्राणम्।

राष्ट्र के कृत्यों में एक कर्म गो-ब्राह्मण की रक्षा भी है।

देवल जी लिखते हैं—

नास्ति राज्ञा समस्ततनुत्यागसदृशो धर्मः।
गोब्राह्मणमित्रधनरक्षणार्थं मृतास्ते स्वर्गलोकभाजः॥

महाभारत शान्तिपर्व में व्यास जी लिखते हैं—

गोब्राह्मणार्थे व्यसने च राजा राष्ट्रोपमर्दे स्वशरीरहेतोः ।
स्त्रीणां च विक्रुष्टशतानि श्रुत्वा विप्रोऽपि युद्ध्यते महाप्रभावः ॥
१४।८५॥

गोब्राह्मणेभ्यो यज्ञेभ्यो नित्यं स्वस्त्ययनं मम ॥७७।३०॥

अधिक प्रमाण देने का समय नहीं । निःसंदेह आर्य राजनीति में गो-ब्राह्मण का एक विशिष्ट स्थान है ।

ब्राह्मण के सब लक्षण तो यहां कहे नहीं जा सकते । परन्तु एक श्लोक अवश्य सुनाने योग्य है— ।

विद्यालक्षणसंपन्नाः सर्वत्राम्नायदर्शिनः ।
एते ब्रह्मसमा राजन् ब्राह्मणाः परिकीर्तिताः ॥

ब्राह्मण सम्पूर्ण विद्या युक्त होता है । वह अठारह विद्याओं को, जिनमें संसार का सम्पूर्ण ज्ञान होता है, हस्तामलकवत् जानता है । वह आचार संपन्न है । वह प्रत्येक बात में आम्नाय अर्थात् तद्विषयक मूलशास्त्र का प्रमाण जानने वाला है । ऐसा ब्राह्मण ब्रह्मा के समान है ।

प्यारे मित्रो ! गम्भीरता से सोचकर देखो । आज ऐसे कितने ब्राह्मण आर्य-समाज में विद्यमान हैं ?

इसके विपरीत भारत में आज ब्राह्मण के लिए कोई स्थान नहीं । सच्चा श्रोत्रिय आज नहीं है । आज ब्राह्मण बनने की उत्कट इच्छा वाला व्यक्ति भी ब्राह्मण नहीं बन सकता । भोजन-समस्या अतिकठिन बना दी गई है । भिक्षा दुर्लभ है । बाबू कहता है—ओ ब्राह्मण ! ओ संयासी ! कोई काम कर । मानो विद्या-अभ्यास तप और त्याग कोई काम ही नहीं । विद्या तो अंग्रेजी शिक्षा ही रह गई है ।

८. आठवां मूलतत्त्व वर्ण-संकरता विषयक है। वर्णाश्रम के आधार पर मानव सहस्रों वर्षों तक परम सुख में रहा। पारसी मत, शक जाति, और मिश्र आदि में वर्णाश्रम का प्रचार था, तभी लोग सुखी थे। वर्णाश्रम के प्रथम स्पष्टकर्त्ता स्वायम्भुव मनु ने शूद्र और चण्डाल तक के कल्याण का मार्ग कहा है। आज के लोग जो मनु को समझे नहीं, मनु पर मिथ्या आरोप लगा रहे हैं। मनु और मनु के अनुयायी ऋषि दयानन्द सरस्वती ने ही शूद्र को ब्राह्मण बनने का अधिकार दिया है, पर घोर तप आवश्यक है। ऋषि दयानन्द सरस्वती श्री अम्बेदकर को मन्त्री बनाकर उन्हें शूद्र न रहने देते। यह अत्यन्त भूल हुई जो हरिजन की पुनः एक श्रेणी बन गई है। वे तो वैसे के वैसे ही रहे। ऋषि ने इस भूल को समझा था। अन्य लोग इतने दूरदर्शी नहीं हुए।

इसके विपरीत वर्णसंकरता दुःखों का मूल है। वर्णसंकरता क्या है? Classless समाज का दूसरा नाम वर्णसंकरता है। Classless समाज बनाने वाले मुंह की खायेंगे। योरुप नष्ट हो रहा है। और इस अज्ञान से भारत नष्ट होगा।

वनस्पति में श्रेणियां हैं। फूलों में वर्ण हैं। स्टालिन भी अपनी कुर्सी पर आप ही बैठता है। वह किसी मजदूर को अपनी कुर्सी नहीं सौंपता। पुनः Classless समाज का क्या अर्थ? विद्या और labour, वाणिज्य और शास्त्राभ्यास अथवा वैश्यपन और ब्राह्मणत्व एक समान नहीं है। कहां ब्राह्मण का पदे-पदे अनृत से भय, कहां ब्राह्मण का अन्न की पवित्रता का परम ध्यान और कहां व्यापारी का, और आज के व्यापारी का परम अधःपतन। ये सब एक नहीं हैं। हां घृणा पाप है, पर सबको उचित स्थान देना बुरा नहीं। वैश्य क्यों छोटा है, और वर्णसंकर क्यों पतित है? इसका ज्ञान नारद के शब्दों में नारदीय मनु संहिता २।३९, ४०, ४३ द्वारा कुछ स्पष्ट हो जाएगा—

धनमूलाः क्रियाः सर्वा यत्नस्तस्यार्जने मतः ।
रक्षणं वर्धनं भोग इति तस्य विधिः क्रमात् ॥
तत्पुनस्त्रिविधं ज्ञेयं शुद्धं शबलमेव च ।
कृष्णं च, तस्य विज्ञेयो विभागः सप्तधा पुनः ॥
पार्श्वक्र—द्यूत चौर्यार्ति—प्रतिरूपक-साहसैः ।
व्याजेनोपार्जितं यच्च तत्कृष्णं समुदाहृतम् ॥

अर्थात्—धन तीन प्रकार का है। शुद्ध शबल और कृष्ण। काला धन उत्कोच=रिश्वत आदि का; द्यूत=जुआ सट्टा आदि का; चौर्य =चोरी तथा धोखे से हिसाब दिखा कर कमाया हुआ; आर्ति=पीड़ा देकर पगड़ी आदि के रूप में लिया गया, प्रतिरूपक=नकली अथवा जाली वस्तुएं बनाकर कमाया गया, यथा नकली घी, नकली तेल, नकली औषधें, नकली लेबल लगा कर कमाया धन; और साहस अर्थात् महा भयङ्कर कामों से कमाया गया; व्याज अथवा मिलावट से प्राप्त ये सब काले धन हैं।

ऐ संसार के लोगो ! नारद का ऋषिपन, नारद की त्रिकालज्ञता देखो। उसने कैसा चित्र उतारा है, मानो आज के युग का फोटो ले लिया है। भीष्म जी भी कहते हैं—नकली वस्तुएं जिस राज्य में बिकती हैं, वह नष्ट हो जाता है—

जर्जर चास्य विषयं कुर्वन्ति प्रतिरूपकैः ।

वर्तमान भारत में इस दोष का बाहुल्य है। परिणाम आपके सामने आएगा।

वर्ण-संकर लोग, अकुलीन लोग, लोलुप लोग, मर्यादाहीन लोग ऐसे जघन्य कर्मों में अधिक प्रवृत्त होते हैं। इस Classless के रोग के अधिक भयङ्कर परिणाम अभी देखोगे। आर्य राजनीति इस धांधली को, इस लोलुपता को, कुलीनता और सत्य वर्णाश्रम से दूर करती रही है, और भविष्य में भी करेगी।

आज Classless समाज के कारण किसी का कोई कर्तव्य तो रहा नहीं, सब के अधिकार ही हो गए हैं। इस विषय पर मनु के आधार से हमने सबसे पहले शिमला में एक व्याख्यान दिया था। उस के एक वर्ष पश्चात् महात्मा गांधी जो ने थोड़ा सा कर्तव्य पर बल दिया। पर कर्तव्य तो वर्णाश्रम में ही है। वर्णसंकरता अर्थात् Classless समाज में अधिकार ही होते हैं। उनका फल है कि प्रत्येक क्लर्क आज आधा समय वेतन-वृद्धि विषयक योजनाओं में ही लगाता है। वह कर्तव्य बहुत थोड़ा करता है।

(९) unions आज की यूनिअनें कर्तव्य सिखाने के लिए नहीं बनतीं। वे केवल वेतन-वृद्धि विषयक आन्दोलनों के लिए बनती हैं। पुराने दिनों में भी unions होती थीं। उनमें कुल, गण, निगम, श्रेणी और पूग आदि थे, परन्तु उनके आदर्श शुभ और उच्च थे। आज की हिंसावृत्ति उनमें न थी। कृतज्ञता का भाव उनमें बना रहता था। मार्क्स ने मनुष्य के नीचतम भावों को जगाकर, तथा निर्धनों से सहानुभूति के ब्याज से उन्हें उच्च तो नहीं बनाया, उन्हें निचली हिंसा-प्रवृत्ति वाला बना दिया है। वर्तमान unions को कर्तव्य का लक्षण ही अज्ञात है। अतः आर्य राजनीति मध्यम मार्ग पकड़े है। वह न धनी का पक्ष, न निर्धन का पक्ष करती है। उसमें धन-विभाजन का अति उच्च आदर्श है।

(१०) धन-विभाजन। मनु कहता है—

योऽसाधुभ्योऽर्थमादाय साधुभ्यः सम्प्रयच्छति।
स कृत्वा प्लवमात्मानं सन्तारयति तावुभौ॥

अर्थात्—जो पुरुष असाधु=दुष्ट पुरुषों से धन को छीन कर साधु=श्रेष्ठ पुरुषों को वह धन दे देता है, वह अपनी नौका के द्वारा उन दोनों साधु असाधु को तार देता है।

महर्षि ने कितने थोड़े शब्दों में धन-विभाजन का एक सुवर्ण-तुल्य नियम बना दिया है। इससे बढ़कर मनुष्यमस्तिष्क पहुंच ही नहीं सका।

साधु अगणित धन रख सकता है, पर दुष्ट नहीं। साधु अपने धन को श्रेष्ठ कामों में लगा देगा। वह तो धन का रखवालामात्र है। वह धन की वासना में फंसा नहीं है। वह शास्त्र का शासन जानता है—

संविभज्य हि भोक्तव्यं धनं सद्भिरितीष्यते ॥

धन बांट कर ही भोगना चाहिए। और असाधु चाहे कहीं हो, वह धन का दुरुपयोग ही करेगा। सहस्रों मजदूर और किसान बीड़ी में, सिनेमा में, शराब में, मुकद्दमा में, जुए में अपने थोड़े से धन को आज भी नष्ट कर रहे हैं।

धन-विभाजन का आदर्श पूंजीपति अथवा मजदूर के शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं हो सकता। उस के लिए तो मनु का प्रकार ही सर्वोत्तम है।

भीष्म जी इसी परम उज्ज्वल नियम को अपने उपदेश में दोहराते हैं—

उपासिता च वृद्धानां जिततन्द्रीरलोलुपः ।
सतां वृत्ते स्थितमतिः सन्तो ह्याचारदर्शिनः ॥२०॥
न चाददीत वित्तानि सतां हस्तात् कदाचन ।
असद्भ्यस्तु समादद्यात् सद्भ्यः संप्रतिपादयेत् ॥२१॥

भले पुरुषों से राजा कभी धन न छीने, और दुष्ट पुरुषों का धन छीन ले। ब्राह्मण असत्य से ऊपर है, अतः वह सर्व-श्रेष्ठ है। इसीलिए श्रोत्रिय अकर=कररहित है।

अभिप्राय यह है कि दुष्ट के पास धन नहीं रहना चाहिए। यह वेद का उपदेश है, ब्रह्मा का शासन है, और ऋषियों का अनुशासन

है। राजा किन धनियों का धन छीने, इस विषय में आपने अगले श्लोक कहीं-कहीं उपदेशों में सुने होंगे। अनेक भाइयों ने वे श्लोक मुझसे लिख लिए हैं। वे श्लोक राजविद्या-निष्णात महामुनि बृहस्पति के शास्त्र के हैं—

सभा-प्रपा-देवगृह-तडाकाराम-संस्कृतिः।
तथाऽनाथ-दरिद्राणां संस्कारो योजनक्रियाः॥
पालनीयाः समर्थैस्तु यः समर्थो विसंवदेत्।
सर्वस्वहरणं दण्डः तस्य निर्वासनं पुरात्॥

अर्थात्—सभाएं, बड़े-बड़े भवन, जिनमें अनेक, सांझे काम हो सकें, प्याऊ, अग्निहोत्र के स्थान, महान् तालाब तथा उद्यान आदि बनाना अथवा टूटने फूटने पर उनका संस्कार वा मरम्मत करना, तथा अनाथ और लंगड़े लूले दरिद्रों को वस्त्रादि देना, और उनका जीवन-निर्वाह कराना, ये काम धनी लोगों के हैं। जो धनी इन श्रेष्ठ कामों के करने में आनाकानी करे, उसका सर्वस्व राजा छीन ले और उसे नगर से निकाल दे, राष्ट्र से निकाल दे। वह दुष्टता का पुन्ज है, और उसके कारण देश में अन्य लोग भी लोलुप और दुष्ट हो जाएंगे।

इसी भाव को बृहस्पति-समान बुद्धि रखनेवाले विदुरजी ने भी कहा है—

द्वावम्भसि निवेष्टव्यौ गले बद्ध्वा दृढां शिलाम्।
ब्राह्मणं चाप्रवक्तारं धनवन्तमदायिनम्॥

अर्थात्—दो पुरुषों को, उनके गले में दृढ़-शिला बांध कर गहरे समुद्र में डुबो देना चाहिए। प्रथम उसे, जो अपने को ब्राह्मण कहता है, और स्वाध्याय तथा प्रवचन नहीं करता। तथा दूसरे उसे, जिसने धन एकत्र किया है, और उसे दूसरों में बांटता नहीं।

मार्क्स ने धन के विभाजन-विषय में लोगों की नीच प्रवृत्ति को जगाया है। इससे संसार में शान्ति के स्थान में अशान्ति फैली है। मानवश्रेणियों में, वर्गों में घृणा और हिंसा की वृत्ति उत्पन्न हो गई है। आर्य धन-विभाजन में त्याग का महान् नियम काम कर रहा है। इससे मनुष्य में उच्चता आती है। भारत के प्रतापी सम्राट् मनु, इक्ष्वाकु, भरत, मरुत्त, भगीरथ, राम आदि स्वयं धन का त्याग करते थे। उन पर मार्क्स का प्रभाव नहीं था। उन पर वेद का प्रभाव था। वे श्रद्धा के कारण संन्यासी और वानप्रस्थ बनते थे, भय से नहीं। मार्क्स के मत में जीवन की उच्चता का, जिससे मानव चेहरे पर अलौकिक तेज दीखता है, सर्वथा अभाव है।

मार्क्स कहता है—संसार में धन-उपार्जन के उपाय बदल गए हैं। बड़े-बड़े कारखाने चल पड़े हैं, अतः धन-विभाजन के पुराने नियम काम में नहीं आ सकते। नए नियमों की आवश्यकता है। हमारा इस पर कथन है कि जब मार्क्स ने संसार का पुराना इतिहास पढ़ा ही नहीं, तो उसकी विचारधारा युक्त कैसे हो सकती है? उसकी विचारधारा दो सौ चारसौ वर्ष के अनुभवों पर स्थिर है। वह भारत के ऋषियों के विचार से टक्कर लेता, तो उसकी योग्यता की परीक्षा हो जाती। सोशलिस्ट में भी यही न्यूनता है।

(११) सचिव-मण्डल पर मन्त्री-मण्डल का प्रभुत्व—आर्य राज-नीति में अमात्य सचिव और मन्त्री तीन शब्द प्रयुक्त हुए हैं। आज इनके अर्थों में कोई भेद दृष्टि-गत नहीं होता। पर अति पुरातन काल में इनमें भेद था। प्रतीत होता है कि अमात्य तथा सचिव प्रायः वेतनभोगी होते थे। रामायण में लिखा है कि महाराज दशरथ के आठ अमात्य सुमन्त्र आदि थे। मनु भी कहता है—

सचिवान् सप्त चाष्टौ च प्रकुर्वीत विचक्षणान्।

परन्तु मन्त्री इनसे ऊपर होते हैं। ऋत्विग् पुरोहित और मन्त्री निःस्पृह ऋषि होते थे। अमात्य-मण्डल के ऊपर होते थे। उनके कारण राष्ट्र निष्पक्ष मार्ग पकड़े रहता था। जब महाराज दशरथ राम को विश्वामित्र के साथ भेजने में आनाकानी कर रहे थे, उस समय ऐसे ही वसिष्ठ मुनि ने दशरथ को कठोरता से कहा था कि वचन पूरा करो। दशरथ चुप हो गया था। आज के अमात्य-मण्डल उच्छृङ्खल हैं। अतः अधर्म का काम कर लेते हैं, और राष्ट्र दुःख में पड़ जाता है।

(१२) भारतीय राजशासन में यद्यपि उपज के थोड़े से साधन शासन के अधीन रखे गए हैं, यथा सुवर्ण आदि की खानें, पर सब खानों पर राज्य का अधिकार श्रेयस्कर नहीं समझा गया—

सर्वाकरेष्वधिकारः। मनु० ११।६२॥

समस्त आकरों पर अधिकार उपपातक माना गया है। भूमि राज्य की है, पर जो भूमियां परम्परा से विभिन्न शासनों के अनुकूल विभिन्न लोगों के पास हैं, वे तत्काल छीनीं नहीं जा सकतीं। हां यदि उनके अधिकारी असाधु हैं, तो उनसे उस दुष्टता के कारण छीनी जा सकती हैं, यह विषय अत्यन्त गम्भीर और लम्बा है, अतः संक्षेप में कहा नहीं जा सकता।

(१३) आर्य राजशास्त्र के अनुसार देश के शासन में शूद्र का अधिकार नहीं। शूद्र ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय बन सकते हैं। उस पर वह राज्यभार सम्भाल सकता है। परन्तु एक ओर वह शूद्र बना रहे, और दूसरी ओर राज्य करे, तो आपत्ति ही आपत्ति है। अतः मनु भविष्यवाणी करता है—

यद् राष्ट्रं शूद्रभूयिष्ठं नास्तिकाक्रान्तमद्विजम्।
विनश्यत्याशु तत् कृत्स्नं दुर्भिक्षव्याधिपीडितम्॥

अर्थात्—जो राष्ट्र शूद्रों से परिपूर्ण है, जहां परलोक को न माननेवाले अधिक हो जाते हैं, जहां त्यागी ज्ञानी ब्राह्मण नहीं रहते वह राष्ट्र शीघ्र नष्ट हो जाता है। उसमें दुर्भिक्ष अन्न की न्यूनता और रोग की पीड़ा रहती है।

यह अवस्था आज भारत की हो रही है। मजूर माई बाप है, मजूर ही सब कुछ है, ब्राह्मण की क्या आवश्यकता है, परलोक कुछ नहीं, मौज करो, गुलछर्रे उड़ाओ, ऐसी दीन-दशा में यह देश आगया है। जो राजनीतिक सिद्धान्त मजूर को सदा मजूर रखके प्रसन्न हैं, वे मजूर के मित्र नहीं हैं। आर्य शासन उन्हें अवसर देता है कि मजूर न रह कर ऊंचे वर्ण के बन जाएं। इससे बढ़कर हित कल्याण और न्याय और क्या हो सकता है ?

इसलिए मनु की सम्मति है—

न शूद्रराज्ये निवसेन् नाधार्मिकजनावृते।
न पाषण्डिगणाक्रान्ते नोपसृष्टेऽन्त्यजैर्नृभिः ॥

अर्थात्—स्नातक शूद्रराज्य में न रहे। यत्न से प्रचार से विद्या और ज्ञान के बल से उस राजा को उच्च कर दे, अथवा किसी दूसरे को राजा वरण करा दे। अधार्मिक जनों के बाहुल्य वाले देश में भी न रहे। पाषण्डि-गंणों से आक्रान्त देश में न रहे। इन सब स्थानों में उसकी विद्या सफल न होगी।

अतः स्पष्ट है कि आर्य पुरुषों को, विशेषतः युवकों को संसार में श्रेष्ठता स्थिर रखने के लिए राज्य का सूत्र श्रेष्ठ धार्मिक ज्ञानी त्यागी लोगों के हाथ में देना चाहिए, अज्ञानी लोगों के हाथ में नहीं।

आज लोग साइंटिफिक का नाद बहुत गुञ्जाते हैं। वे योरुप को ही विज्ञानी मानते हैं। ऐसे लोग आयुर्वेद को, आर्य राजनीति को शिक्षा के भारतीय प्रकार को Unscientific अवैज्ञानिक कहते हैं।

वस्तुतः यह उनका परम अज्ञान है। वे विद्या के समीप तक नहीं गए। विज्ञान के बदनाम करने का उन्होंने ठेका ले लिया है। ऐसी पाखण्ड की प्रवृत्तियां देश से दूर होनी चाहिएं। वर्तमान अनेक अज्ञानयुक्त बातों को वैज्ञानिक कहना सरासर पाखण्ड है। ज्ञानवान् पुरुषों को इस को दूर करना चाहिए। ज्ञान में, यथार्थ ज्ञान में, ज्ञानयुक्त-राज्य में, धार्मिक प्रवृत्तियों में ही वास्तविक सुख है।

(१४)आर्य राजनीति के निर्मल, स्वच्छ उच्चतम रूप को समझने के लिए भूगोल, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र तथा संसार के और विशेषतया भारत के पुराने इतिहास को जानने की महती आवश्यकता है। इस इतिहास को सर विलयम जोन्ज, अलफिन्सटन, मैक्समूलर, कीथ, विन-सेण्ट स्मिथ, फ्लीट, बूहलर, ओल्डन-वर्ग, राय चौधरी, पांडुरंग वामन काणे, जवाहरलाल नेहरू, मजुमदार और कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने अत्यन्त कलुषित कर दिया है। ये लेखक इतिहास को समझ नहीं पाए। इन्होंने भारतीय इतिहास का कलेवर सर्वथा नष्ट किया है। इसीलिए सारा संसार वैदिक संस्कृति का विरोधी बन रहा है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती ने इतिहास के महत्त्व का सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास के अन्त में वर्णन किया है। उनके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी के अध्यापक श्री रामदेव जी ने इस ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। वे इस काम को पूरा नहीं कर सके। वे कालधर्म को प्राप्त हो गए। उनके इतिहास में तिथियों का क्रम अधूरा रहा।

योरुप के ऐतिहासिक और उनके पथ पर चलने वाले एतद्देशीय पूर्वोक्त लेखक ब्रह्मा, स्वायंम्भुव मनु, वैवस्वत मनु, कपिल, सनक, सनत्कुमार, आसुरि, वेदव्यास और अन्य अनेक ऋषियों को ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं मानते। उनका कहना है कि इनका अस्तित्व कल्पित है।

उन सबके कल्पित मतों के खण्डन के लिए मैंने भरसक प्रयास किया है। मेरा ग्रन्थ १५ भागों में प्रकाशित होगा। उसका प्रथम भाग आपके सामने आ गया है। आगे आने वाले आर्य ऐतिहासिक मेरी त्रुटियों को दूर कर सकेंगे। इस इतिहास ने एक बार योरुपीय विचारधारा के अनुयायियों में कोलाहल उत्पन्न कर दिया है। इस इतिहास में परिश्रम करने का फल है, जो मैं राजनीति विषयक विचार आपके सामने रख रहा हूं।

वर्तमान युग की राजनैतिक आवश्यकताएं

(१) भारत की सर्व प्रथम आवश्यकता भाषा विषयक है। भारत के नव-निर्मित विधान में हिन्दी भारत की भाषा स्वीकार की गई है। इससे काम न चलेगा। इसका कारण है—

हिन्दी अपभ्रंश भाषा में शब्दों के विकृत रूप वर्ते जाते हैं। विकृत रूप असत्य होते हैं। उन्हें अपठित लोग बोलते हैं। प्रश्न होता है कि क्या अंग्रेजी, जर्मन, फ्रैंच, रूसी, फारसी-अरबी, इबरानी, यूनानी, चीनी आदि भाषाएं भी अपभ्रंश हैं। उत्तर है—निस्सन्देह। आज तत्तद् देशों के लोगों को इस सत्य का ज्ञान नहीं, पर जब उन को ज्ञान हो जाएगा, तथा जब वे विज्ञान के समीप हो जाएंगे, तो वे संस्कृत को अवश्य ग्रहण करेंगे।

यह कतिपय जर्मन लेखकों को चतुरता थी कि उन्होंने संसार को यह पाठ पढ़ा दिया कि "भाषा स्वाभाविक प्रवृत्ति से रूप बदल कर उन्नति को प्राप्त होती है।" वे यहीं तक नहीं रहे, उन्होंने मिथ्या कथन किया कि वेद से पूर्व भी भाषाएं हो चुकी हैं। आज भारत के सभी विश्वविद्यालयों में उन्हीं के विचार पढ़ाए जाते हैं। अतः अंग्रेजी पढ़ा लिखा भारतीय यह सोचने की भी शक्ति नहीं रखता कि यह बात सर्वथा असत्य है। शास्त्र में कहा है—

प्रकृति सत्यमित्याहुः विकारोऽनृतमुच्यते ।

अर्थात्—प्रकृति को सत्य कहते हैं, और विकार अनृत होता है।

यदि संसार में संस्कृत न होती, और लोग अपनी-अपनी अपभ्रंश भाषाएं बोलते रहते, तो कदाचित् अधिक आपत्ति न थी। पर सूर्य के उदय के पश्चात् खुले क्षेत्र में जो पुरुष दीपक जला कर अपना काम करना चाहता है, वह प्रमत्त कहा जाएगा। इसी प्रकार संस्कृत की विद्यमानता में उसके अपभ्रंशों से काम चलाना हेय है।

आज यदि ऋषि दयानन्द सरस्वती जीवित होते, तो आर्ष ग्रन्थों के, आर्ष विद्याओं के, वेदों के वे उत्साहपूर्ण प्रचारक भारत में संस्कृत प्रचार का एक नया युग उपस्थित कर देते।

संसार में इबरानी भाषा लुप्त सी थी। उसके विषय में १० जुलाई सन् १९५१ में ट्रिब्यून में मुद्रित अगला लेख देखने योग्य है—

LITERARY REVIVAL IN ISRAEL

London—Hebrew, which has been almost a dead language for more than 1,000 years is to-day experiencing a great revival. Visitors from Israel talk of the amazing speed at which Hebrew is staging a come back.

Thirty years ago in the whole of Palestine, only 80,000 people could speak and write in Hebrew. To-day, over a million and quarter Jews and non-Jews use Hebrew as their normal means of intercourse.

Educational authorities have started five month courses called Ulpaniun, for the teaching of Heb-

rew. Only 23 per month are charged for tuition board and lodging. Thousands of new comers are availing themselves of the facilities to learn the language.

Behind the scenes, professors are working over-time to bring the old language up-to date.

अर्थात्—ईस्राईल राज्य के पैलिसटाईन नगर में ३० वर्ष पूर्व केवल ८० सहस्र पुरुष इबरानी बोलते थे। आज १२½ लाख से अधिक यहूदी और यहूदी इतर लोग अपना सामान्य व्यवहार इबरानी से चलाते हैं। सारा देश इस भाषा को सजीव करने में प्रवृत्त है। वहां इसके लिए एक आंधी सी चल रही है।

यह क्यों ? वहाँ के लोगों को अपने देश से, अपनी संस्कृति से; अपने पूर्व कृत्यों से प्रेम है। यह यहां भावना ही नहीं। यहां तो संग्रथित संस्कृति बनाई जा रही है। यह होगा नहीं। संसार, की सम्पूर्ण बोलियों और भाषाओं की माता संस्कृत, शीघ्र अपना स्थान लेगी। अभी आर्यसमाज में बल है। आर्यसमाज राजनीति के क्षेत्र में आगे बढ़ेगा, और करके दिखा देगा।

भारत में संस्कृत के विरोधी कौन हैं ? उत्तर है—कम्यूनिस्ट सोशलिस्ट और कांग्रेस के थोड़े से व्यक्ति। ये क्यों विरोधी हैं ? इनका मुख रूस योरुप और अमरीका की ओर है। वे आलस्ययुक्त हैं। स्वयं परिश्रम कर नहीं सकते, अतः लोगों को भी उपदेश देते हैं कि भाषा common man जनसाधारण की होती है।

यह मत समूल अशुद्ध है। यदि भाषा common man की हो तो विज्ञान के सब ग्रन्थ तथा सारी वैज्ञानिक उन्नति समाप्त कर देनी चाहिए। सामान्य मनुष्य तो वनस्पतियों की श्रेणियों के भी पूरे नाम

नहीं जानता । वह घास की सब जातियों के नाम नहीं जानता । तो क्या वनस्पतिशास्त्र के सब शब्द नष्ट हो जाएं ?

भाषा तो विद्वानों की होती है। भाषा है भी भावप्रकाशन और सूक्ष्म से सूक्ष्म विद्याओं के विस्तार और रक्षण के लिए । ऐसी भाषा संस्कृत ही है । अंग्रेजी, जर्मन, फ्रैंच और रूसी में वे गुण नहीं हैं । विज्ञान जैसा संस्कृत में सुगमता से पढ़ा पढ़ाया जा सकता है, वैसा इन भाषाओं द्वारा नहीं । ऋषि की यह हार्दिक कामना थी । उन्होंने लिखा है—

'इससे यह मेरा विज्ञापन है आर्यावर्त्त देश का राजा इंगरेज बहादुर से, कि संस्कृत विद्या की ऋषि-मुनियों की रीति से प्रवृत्ति कराये । इससे राजा और प्रजा को अनन्त सुखलाभ होगा । और जितने आर्यावर्त्तवासी सज्जन लोग हैं, उनसे भी मेरा यही कहना है कि इस सनातन संस्कृतविद्या का उद्धार अवश्य करें । जो यह संस्कृतविद्या लोप हो जाएगी, तो सब मनुष्यों की बहुत हानि होगी, इसमें कोई सन्देह नहीं ।'

मुझे आशा है कि आर्य-समाज का रक्त-प्रवाह बन्द नहीं हो गया । आर्य जनता का विश्वास मन्द नहीं पड़ गया । आर्य वीरों की श्रद्धा लुप्त नहीं हुई । अतः ऋषि का भाव सजीव हो उठेगा ।

लोग कहते हैं—यह असंभव है । हम इस असंभव को संभव कर देंगे । हम ईश्वर के ज्ञान वेद को, कपिल के सूत्रों को, पाराशर के वृक्षायुर्वेद की कौटल्य के अर्थ-शास्त्र को, वाल्मीकि की रामायण को, व्यास के महाभारत को, और याज्ञवल्क्य के शतपथ ब्राह्मण को उन्हीं परम पवित्र महायोगी जनों की भाषा में पढ़ेंगे । तभी आर्य राजनीति का प्रसार भारत में होगा । ऐ आर्य लोगो ! उठ पड़ो, और ऐसे सम्मेलनों को सफल कर दो । राज्यभार अपने हाथ में लो, तभी ये काम पूर्ण द्रुतगति से हो सकेंगे ।

आज चारों ओर से ध्वनि उठती है कि हिन्दी में संस्कृत के कठिन शब्द न लाए जाएं। क्यों जी ! संस्कृत ने कोई पाप किया है ? मुझे ऐसे लोगों की बुद्धि पर हंसी आती है। जब बढ़े हुए नख वृथा होने पर कटवा दिए जाते हैं, जब लोग दाढ़ी मूंछ के बालों को क्षुरे की भेंट कर देते हैं, जब आए हुए अंग्रेजों को भारत से निकलना पड़ा, तो बाहर से आए महा अपभ्रंश शब्द यदि हिन्दी में से निकल जाएं, अथवा निकाल दिए जाएं, तो इसमें क्या आपत्ति है ? आलसी लोग यदि स्वयं उन्नति नहीं कर सकते, तो हमारे मार्ग में क्यों रोड़े अटकाते हैं ? भावी संसार हमारे हाथ में होगा। हम हिन्दी को पूर्ण शुद्ध बना देंगे, और संस्कृत को प्रचलित करके रहेंगे।

पाठकवृन्द ! विचारिए कि जब लण्डन की नभोध्वनि (radio) से common man की अंग्रेजी नहीं बोली जाती, जब वहां की शिष्ट-अंग्रेजी बोलने का एक प्रबन्धविशेष है, तो हमारी हिन्दी पर यह चोट क्यों की जाती है ? हम तो हिन्दी से आगे संस्कृत पर पहुंच रहे हैं।

२—इस प्रश्न के पश्चात् दूसरा एक भयंकर प्रश्न हमारी राजनीति के सामने है। वह है—अंग्रेज अमरीका और रूस के साथ हमारा भावी सम्बन्ध।

अंगरेजों ने गत डेढ़ सौ वर्ष में सतत प्रयत्न किया कि भारत में किसी प्रकार आर्य सत्ता खड़ी न हो सके। जौहन हैकल नामक अंगरेज लिखता है—

British influence and Government are helping Islam to an extraordinary degree..................The bridge builders, railway workers, soldiers and teachers sent by the Govt. are of the Mohammadans

persuasion. And by the railways, roads, schools and good Government the British have brought in money a convenience to enable the representative of Islam to push speedily into the pagan territory to win the pagan mind.

In some places British authorities encourage pagans to be circumcised and become Muslmans.

अर्थात्—'ब्रिटिश-प्रभाव और शासन इस्लाम को असाधारण सीमा तक सहायता दे रहे हैं...... । पुल बनाने वाले, रेलों पर काम करने वाले, सैनिक और अध्यापक, जिन्हें सरकार भेजती है, मुहम्मदी वृत्ति के होते हैं । रेलों, सड़कों, स्कूलों और श्रेष्ठ शासन द्वारा ब्रिटिश ने अनेक सुविधाएं उत्पन्न की हैं, जिनसे इस्लाम के प्रतिनिधि वेग से कोल भील आदि लोगों में फैलें, और उनके मनों को जीत लें ।'

अंग्रेजों की मनोवृत्ति का यह चित्र एक अंग्रेज ने खींचा है । इस मनोवृत्ति के कारण ब्रिटिश सरकार आर्य-समाज के सदा विरुद्ध रही । जब अंग्रेज यहां से गया, तो वह यही मनोवृत्ति अमरीका के लिए छोड़ गया ।

अभी कल की बात है, अमरीका के शासन विभाग के एक उच्चाधिकारी ने कहा । उसका कथन हिन्दुस्तान टाईम्स सन् १९५०, फरवरी २ में छपा—

Communism under control in India

Official sources here consider that minority groups such as the Hindu Mahasabha and the Rashtriya Swayam Sevak Sangh constitute the greatest menace to Indian stability. It was admitted

that if India was unable to control minority disturbances she might be weakened to a point where the communists could gain in effectiveness. (U. S. Intelligence Reports, Washington Feb. 1).

अर्थात्—'यूनाइटिड स्टेट्स' के गुप्तचर विभाग के लोगों का विचार है कि भारत में यदि हिन्दू महासभा अथवा राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ का अधिकार बढ़ा, तो भारतीय स्थिति के लिए एक भारी भय हो जाएगा। ऐसा होने पर कम्युनिस्ट उठ पड़ेगा।

लोग पूछेंगे कि आर्यसमाज का हिन्दू महासभा अथवा राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ से क्या सम्बन्ध है, जो मैंने उनके सम्बन्ध के वचन यहां उद्‌वृत किए हैं। उत्तर स्पष्ट है—गो-ब्राह्मण की रक्षा के विषय में, संस्कृत के राजभाषा बनाए जाने के विषय में, विक्रम-संवत् के प्रचलित करने के विषय में, भारतीय पुरातन वैदिक संस्कृति को रक्षा के विषय में समस्त भूमण्डल में यदि कोई आर्यसमाज के निकट है, तो ढूंढ़ ढ़ाढ़ कर अत्यल्प ज्ञान रखनेवाली ये दो संस्थाएं ही निकलेंगी। अतः इनके विरुद्ध अमेरिका में ऐसे कथनों का अर्थ है, सारी आर्य-भावनाओं पर पानी फेरना।

इसका अधिक स्पष्टीकरण अगले उद्धरण से अनायास होगा। अमेरिका के हारवर्ड विश्वविद्यालय के इतिहास के अध्यापक श्री जेम्स० ए० मिश्नेनर, "लाइफ" नामक पत्रिका में लिखते हैं। उसका 'सार रीडर्स डाइजेस्ट' सन् १९५१, मास सितम्बर पृ० ९७-१०२ पर छपा है। अध्यापक जी लिखते हैं—

अर्थात्—एशिया में इस्लाम सबसे अधिक प्रभावशाली है। तथा भारत और शेष एशिया के मध्य में हिन्दुत्व एक रोक है।

Hinduism forms a barrier between India and the rest of Asia.

Of all Asian religions, the most striking and significant is Islam.

As Islam becomes more powerful, India's spiritual leadership will be increasingly challenged.

अर्थात्—'एशिया में इस्लाम सबसे अधिक प्रभावशाली है। तथा भारत और शेष एशिया के मध्य में हिन्दुत्व एक रोक है।'

पाठकवृन्द ! इसका सूक्षम अर्थ समझ लीजिए। अमेरिका का अध्यापक चेतावनी देता है कि जो कोई एशिया का नेतृत्व करना चाहे, उसे हिन्दुत्व का विरोध करना चाहिए।

ऐसी शिक्षा का प्रभाव पं० जवाहरलाल जी पर है। यदि कोई भोला-भाला आर्यसमाजी कहे कि यहां तो हिन्दुत्व का विरोध है, आर्यसमाज का नहीं, तो उसकी स्थूल बुद्धि के विषय में मौन रहना ही भला है।

हमारा अभिप्राय अगले उद्धरण से और भी स्पष्ट हो जाएगा।

वही अध्यापक पुनः लिखता है—

By her wise and generous postwar handling of India's demand for freedom, Britain saved millions of lives and made possible a western stand in India on a new footing.

अर्थात्—'ब्रिटेन ने भारत में पाश्चात्य-मार्ग को एक नए आधार पर खड़ा कर दिया है।'

इस लेख का प्रथम भाग गहरी राजनीतिक चाल को लिए है, पर दूसरे भाग से स्पष्ट है कि इंगलैंड और अमरीका भारत से तभी प्रसन्न रहेंगे, यदि यहां पाश्चात्य भावनाएं फैलाई जाएं।

इसीलिए पं० जवाहरलाल जी "वैज्ञानिक" के नाम पर आयुर्वेद का विरोध करते हैं।

आर्यसमाज इन पाश्चात्य भावनाओं का विरोधी है, अतः आर्य समाज के विषय में ये क्या कहेंगे, इसका विचार आप स्वयं करलें।

इनसे बढ़कर अगला लेख आपकी आंखें और भी खोल देगा। हिन्दुस्तान टाईम्स सन् १९५१, २० सितम्बर में छपा है—

Mr. NEHRU AT HIS BEST

NEW YORK, Sept. 19—Mr. Nehru was seen at his best these days as he fought for the passage of the Hindu Code Bill in the Indian Parliament, the 'New York Times' said in an editorial today.

'In these days when most of us feel critical of Mr. Nehru's policies towards China, Japan, Russia, Kashmir and his own press, it is good to see him again in the once-familiar role of champion of progress," P. T. I. Reuter.

अर्थात्—'जब पं नेहरू जी हिन्दूकोड बिल का पक्ष-पोषण करते हैं, तो वे प्रगतिशीलता के नेता हैं।'

अब विचारिये, अमरीका का हिन्दूकोड बिल से क्या संबंध ? वह तो अपने लेखों से पण्डित नेहरू जी को उछालना चाहता है कि किसी प्रकार संसार से पुराने आदर्श समाप्त हों, आर्यत्व की अन्त्येष्टि हो जाए।

हम समझते हैं कि अंग्रेज ने अपनी देन अमरीका को दी। अतः आर्यसमाज को घोषणा कर देनी चाहिये, जो आज से वर्षों पहले

होनी चाहिये थी, यदि आर्य विचारक पूरे सजग होते, कि-हम ऐसी भावनाओं का घोर विरोध करते हैं। अमरीका आर्यों से कोई आशा नहीं रख सकता, जब तक आर्य संस्कृति के विषय में, आर्य इतिहास के विषय में, वेद की उल्टी व्याख्याएं उपस्थित करने में वह अपनी नीति नहीं बदलता। इसके लिये आर्यों को अपनी शक्ति संगृहीत करनी चाहिए।

अंग्रेजों को अपने दुष्कर्मों का फल मिल रहा है। ईरान और मिश्र आदि में उसकी जो दशा हो रही है, वह प्रकट है।

अब रूस के विषय में सुनिये। सात-आठ वर्ष हुए रूस की ओर से एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। उसमें संस्कृत भाषा का विरोध इस आधार पर किया गया कि संस्कृत धनी लोगों की भाषा है। मजूर लोग प्राकृत बोलते थे। इस विषय के मूलतत्त्व को न समझते हुए यह आन्दोलन रूस के लिए शोभाकारी नहीं। रूस हमसे मित्रता की आशा कैसे करेगा ?

अतः हमें तो अपने बल पर खड़ा होना है। कांग्रेस, भारतीय होते हुए भी सदा विदेश के वैज्ञानिकों की ओर ताकती रहती है। कम्यूनिस्ट मार्क्स को ऋषियों से बढ़ कर मानता है। सोशलिस्टों के गुरु योरुप में हैं। अतः आर्यसमाज ही है जो मूल का ज्ञाता है, और हिन्दूमात्र को सेवा करके उसे संसार में प्रमुख स्थान दिला सकता है।

३—तीसरा विषय वर्तमान शिक्षा-परक है। प्राचीन भारत में शिक्षा राज्याधीन न थी। सूक्ष्मदर्शी ऋषियों ने इस तत्त्व को समझ लिया था कि यदि शिक्षा राज्याधीन रही, तो समय-समय के राजा शिक्षा का आदर्श अपने अनुकूल बनाते रहेंगे। राज्य शिक्षा को आर्थिक सहायता तो देते थे, पर शिक्षा पर अत्यधिक व्यय प्रजा का ही होता था। इस प्रकार एक तो कर बढ़ाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी,

और दूसरी ओर शिक्षा देने वाले अत्यधिक वेतनों के कारण लोलुप और आदर्शहीन नहीं हो जाते थे।

शिक्षा ऋषियों और ब्राह्मणों के अधीन थी। उस शिक्षा ने जितने योग्य पुरुष उत्पन्न किये, उनका हजारवां अंश भी योरुप और अमेरिका उत्पन्न नहीं कर सके। भारत अभी अंग्रेजों के चरण-चिह्नों पर चल रहा है।

वर्तमान भारत के विश्वविद्यालयों में इतिहास योरुपीय दृष्टि का ही पढ़ाया जाता है। फिलासफी की पढ़ाई में न्याय-वेदान्त आदि का कहीं नाम नहीं। राजनीति की पाठचपुस्तकों में अर्थशास्त्र रखा नहीं जा रहा। Law में मनु आदि के ग्रन्थ पढ़ाए नहीं जाते। कांग्रेस सरकार इस परिवर्तन को होने भी न देगी।

स्वतन्त्र भारत में मौलाना अब्बुलकलाम आजाद जी ने एक शिक्षा कमीशन स्वीकार किया। उसमें दो विदेशी और शेष अंग्रेजी पढ़े-लिखे एतद्देशीय थे। उनमें संस्कृत का प्रकाण्ड पण्डित आर्ष शिक्षा-पद्धति को जाननेवाला एक भी व्यक्ति न था।

आज भारत की सब शिक्षासंस्थाओं में ऊट पटांग शिक्षा दी जा रही है। विश्वविद्यालयों के अधिकांश रजिस्ट्रार सदा यही रट लगा रहे हैं कि अभी अंग्रेजी को हटाने का समय नहीं आया। वे वेतन-भोगी लोग अपने अंग्रेजी अभ्यास के कारण सबको उसी मार्ग पर ले जाना चाहते हैं। उनका आलस्य देश का नाश कर रहा है। पर हम अंग्रेज़ी को निकाल कर रहेंगे। आर्यसमाज के सौ लेखक उच्च वाङ्मय उत्पन्न करके सम्पूर्ण देश को जीत सकते हैं।

विज्ञान-विषयक सहस्रों शब्द तो आर्ष-ग्रन्थों में से मिल जायेंगे। अभी एक ग्रन्थ पराशर ऋषि का बनाया वृक्ष-आयुर्वेद मिला है। उस में वनस्पतिशास्त्र का अद्भुत ज्ञान, और इस विज्ञान के कोई १५० अत्यन्त आवश्यक शब्द मिल गए हैं।

अधिकांश गुरुकुलों में भी पाश्चात्य विचारों की छाप है। आर्य-समाज का इस समय विशेष कर्तव्य है। वही शिक्षा का पूर्ण उद्धार कर सकता है। युवक-युवतियों की सहशिक्षा के विषय में उसकी अपनी नीति है। राज्यसूत्र आर्यों के हाथ में न हो, तो शिक्षा तीन काल में भी सुधर न सकेगी। सब विद्यालयों में वेदशास्त्र की विरोधी शिक्षा प्रचलित रहेगी, और वर्तमान विद्याविरुद्ध बातें पढ़ाई जाएंगी। इसलिए आर्यपुरुषों के सम्मुख यह गम्भीर समस्या है।

४—एक और प्रश्न है—भारत में ईसा का सन् चलेगा, अथवा भारतीय संवत्? प्राचीन भारत में चार प्रकार का वर्षमान चलता था। सौर, चान्द्र, नाक्षत्र और सावन। इन चारों का दैनिक जीवन में महान् उपयोग है। उसके कहने का यहां स्थान नहीं। कुछ वर्ष हुए आर्य विद्वान् श्री गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० ने इस विषय में एक लेख लिखा था। ऐसे लेख तभी सफल हो सकते हैं, जब आर्यसमाज का राज्य-बल में स्वतन्त्र और प्रधान हाथ हो। यदि ऐसा न किया गया, तो भविष्य में पढ़ने वाले किसी भी विद्यार्थी को रामायण, ब्राह्मणग्रन्थ, महाभारत, ज्योतिष के ग्रन्थ और वेदादि समझ में न आएंगे। संस्कृति के ये स्तम्भ संसार की आंखों से ओझल हो जायेंगे।

५—काल-विभाग में आर्यों का एक महा उज्ज्वल और वैज्ञानिक प्रकार था। उसमें घड़ी पल और मूहर्त आदि का प्रयोग होता था। वर्तमान समय में प्रचलित अंग्रेजी ढंग के घण्टा, मिनट और सैकिण्ड में अनेक दोष हैं। बेचारे संस्कृत पण्डितों को घंटे के लिए जब कोई शब्द न मिला, तो उन्होंने वादन शब्द का प्रयोग आरम्भ कर दिया। वादन शब्द बना हुआ अर्थात् कल्पित है। व्याकरण महाभाष्य में लिखा है—

'न हि कश्चिद् वैयाकरणसमीपं गत्वाह भो वैयाकरण शब्दान् कुरु'।

इसी प्रकार सहस्रों अशुद्ध भावों के लिए नए शब्द कल्पित किए जा रहे हैं। पाश्चात्य अनुकरण का यह फल होना ही था। लोगों के पास यह देखने का समय न था कि हमारे ऋषि इन विषयों में कैसे काम चलाते थे। आर्यसमाज के सामने यह भी एक समस्या है।

६—अगला प्रश्न आयुर्वेदविषयक है। संसार मात्र में स्वास्थ्य और आयुविषयक एक ही शास्त्र है, जो पूर्ण वैज्ञानिक तथा सृष्टि-सिद्धान्त के अनुकूल है। ऐलोपैथी में न पूर्ण वैज्ञानिकता है न निर्दोषता, अतः भारतीय राज्य किस पद्धति को अपनाएगा यह गम्भीर प्रश्न है। कांग्रेस-राज्य ने ऐलोपैथी को अपना लिया है और आयुर्वेद के विपरीत अनेक सशक्त वर्तमान डाक्टर एक भारी आन्दोलन कर रहे हैं। गौतम मुनि अपने न्यायसूत्र में लिखता है कि वेद के प्रमाण होने में आयुर्वेद एक प्रमाण है। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में इस न्याय-वचन का प्रमाण उद्धृत किया है।

यदि आयुर्वेद प्रमाण नहीं, तो वेद का प्रामाण्य हट जाता है। अतः क्या आर्यसमाज शासन में वेद-विरुद्ध बातें चलानेवाली कांग्रेस का साथ देगा अथवा अपना संगठन करेगा? यह एक महान् प्रश्न है।

७—**राजदूत**—प्रत्येक राष्ट्र अपने राजदूत रखता है। वे राजदूत विदेशों में अपने देश की संस्कृति के प्रतिनिधि होते हैं। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास में मानव धर्मशास्त्र के आधार पर राजदूतों के गुण लिखे हैं। उत्कृष्ट राजदूत का एक चित्र महाभारत संहिता उद्योगपर्व में मिलता है। वृद्ध पांचाल-राज्य द्रुपद कहते हैं—

स भवान् कृतबुद्धीनां प्रधान इति मे मतिः ।
कुलेन च विशिष्टोऽसि वयसा च श्रुतेन च ।
प्रज्ञया सदृशश्चासि शुक्रेणाङ्गिरसेन च ॥३॥

विदितं चापि ते सर्वं यथावृत्तः स कौरवः ।
पाण्डवश्च यथावृत्तः कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥४॥

एतत्प्रयोजनं चात्र प्राधान्येनोपलभ्यते ।
स गत्वा धृतराष्ट्रश्च कुर्याद्धर्म्यं वचस्तव ॥१३॥

स भवान्धर्मयुक्तश्च धर्म्यं तेषु समाचरन् ।
कृपालुषु परिक्लेशान्पाण्डवीयान् प्रकीर्तयन् ॥१४॥

वृद्धेषु कुलधर्मं च ब्रुवन्पूर्वैरनुष्ठितम् ।
विभेत्स्यति मनांस्येषामिति मे नात्र संशयः ॥१५॥

न च तेभ्यो भयं तेऽस्ति ब्राह्मणो ह्यसि वेदवित् ।
दूतकर्मणि युक्तं च स्थविरश्च विशेषतः ॥१६॥

'हे दूत ! बुद्धिमानों में प्रधान, कुलीन, वय और वृद्धों से सुनने में विशिष्ट तथा प्रज्ञा में शुक्र और बृहस्पति के समान हो। तुम्हें कौरवों और पांडवों का सब वृत्त ज्ञात है। वहां कौरव-राज धृतराष्ट्र को धर्मयुक्त वचन कहना। तुम स्वयं धर्मयुक्त हो। तुम वेदवित् ब्राह्मण हो, दूतकर्म में युक्त हो, फिर वृद्ध हो, अतः तुम्हें उनसे कोई भय नहीं है।'

कुलीन में क्या गुण है, और अकुलीन में क्या दोष है, इसकी अद्वितीय व्याख्या शान्तिपर्व में मिलती है—

कुलजः प्राकृतो राजंस्तत्कुलीनतया सदा ।
न पापे कुरुते बुद्धिं निन्द्यमानोऽप्यनागसि ॥५॥
अकुलीनस्तु पुरुषः प्राकृतः साधुसंक्षयात् ।
दुर्लभैश्वर्यतां प्राप्तो निन्दितः शत्रुतां व्रजेत् ॥६॥

अर्थात् —'कुल में उत्पन्न व्यक्ति स्वाभाविक निष्पाप होता हुआ भी यदि निन्दा किया जाता है तो अपनी कुलीनता के कारण पाप में बुद्धि नहीं करता। अकुलीन पुरुष स्वभाव से, जीवन में श्रेष्ठ पुरुषों की संगति न मिलने से, दुर्लभ ऐश्वर्य को प्राप्त होकर एक बार भी निन्दा किये जाने पर शत्रु बन जाता है।'

राजदूत का वय—राजदूत भी अमात्य होता है, अतः वह पचास (५०) वर्ष से न्यून वय का न होना चाहिये। शान्तिपर्व में लिखा है—

पंचाशद्वर्षवयसं प्रगल्भमनसूयकम्।
श्रुतिस्मृतिसमायुक्तं विनीतं समदर्शिनम्॥

अर्थात् ५० वर्ष से न्यून वय का राजदूत नहीं होना चाहिये।

वर्तमान मांग है कि राजदूतों की धर्मपत्नियां पाश्चात्य ढंग पर ढली होनी चाहियें। आर्यसमाज ने विचार करना है कि वह क्या बात स्वीकार करता है।

८—लोग प्रश्न करते हैं कि वर्तमान भारत में ईसाई, मुसलमान कम्युनिस्ट, सोशलिस्ट आदि अनेक प्रकार के लोग रहते हैं। इस अवस्था में पूर्वोक्त अनेक बातें जो कि आर्यसंस्कृति की देन हैं, कैसे चल पायेंगी ? उत्तर स्पष्ट है—हम केवल इसलिए इन बातों का समर्थन नहीं करते कि ये आर्य संस्कृति की देन हैं, अपितु हम इसलिये इनके प्रचालन पर बल देते हैं कि ये ही परम वैज्ञानिक श्रेयस्कर और मानव का कल्याण करने वाली बातें हैं। दूसरे दलों की बातें वे गुण नहीं रखतीं।

९—अब planning को लीजिए। वर्तमान युग में अनेक आर्थिक योजनायें बन रही है। भारतीय शासन भी इस विषय में अग्रसर हो रहा है। इन सबका मुख भी योरुप की ओर है। योजनावालों ने खाद्य पदार्थों के सुलभ करने का पहले एक मार्ग निकाला। नई-नई

खादें और ट्रैक्टर काम में लाए जाने लगे। पर नए परीक्षण सिद्ध कर रहे हैं कि इनके द्वारा उत्पन्न अन्न में विषों का सूक्ष्म अंश विद्यमान हो गया है। अमरीका से ऐसे ग्रन्थ निकले हैं,जो इस मार्ग का निषेध करते हैं। इन मार्गों से रोग उत्पन्न हो रहे हैं। दूसरी योजनाएं भी बन रही हैं। इनमें गहरी बुद्धि की आवश्यकता है। पर एक व्यक्ति भी संस्कृत के दबे हुए ग्रन्थों से कोई सहायता लेने को उद्यत नहीं। गो-रक्षा की भारत को कितनी आवश्यकता है। गो के लिए ऋषि दयानन्द सरस्वती ने क्या-क्या उपाय सोचे, उनकी आज कहीं चर्चा नहीं। क्या आर्यसमाज इस विषय में दूसरों का नेतृत्व रहने देगा ?

आज बड़े-बड़े डैम (तडाग) बन रहे हैं। इतने बड़े, जितने संसार में थोड़े ही हैं। पर भारत का बहुत सा प्रदेश तो भूचालों की रेखा पर है। यदि कभी किसी भयङ्कर भूकम्प से एक महान् तडाग भी नष्ट हो गया, तो अनुमान कीजिए कि लाखों जनों के प्राण भयानक जलप्लावन से नष्ट हो जाएंगे। उनको रोकने के लिए विशेष उपायों की आवश्यकता है। वर्तमान वास्तु-शास्त्री और जलसूत्रविद् (Engineers) तो एक विषय के ही जानने वाले हैं। उन्होंने अनेक शास्त्र नहीं पढ़े। अतः वे भारी भूलें करेंगे। प्राचीन ऋषियों ने तडागों की आवश्यकता पहले से बता दी है। नारद पूछता है—

कच्चिद् राष्ट्रे तडागानि पूर्णानि च महान्ति च।
भागशः विनिविष्टानि न कृषिर्देवमातृका ॥

अर्थात्—'हे युधिष्ठिर ! क्या तुम्हारे राष्ट्र में महान् तडाग हैं, जो जल से पूर्ण रहते हैं' तथा देश के विशेष भागों में विनिविष्ट हैं। क्या खेती वर्षा पर तो आश्रित नहीं हैं ?'

तडाग तो थे, परन्तु कहां-कहाँ थे ? इसका लाभकारी पूर्ण ज्ञान वर्तमान Planning वालों को नहीं हैं। भूकम्प कब आएगा, किस

प्रदेश में आएगा इसका ज्ञान भी वर्तमान वैज्ञानिक को नहीं है। इसका एक कारण यह है कि यह बात चान्द्र गति से अधिक सम्बन्ध रखती है। चान्द्र वर्ष आज प्रयुक्त नहीं होता। अतः Planning वालों को प्रायः बहुत सी उपयोगी बातें आर्यशास्त्रों से सिखनी पड़ेंगी। क्या आर्यसमाज इस विषय में नेतृत्व नहीं करेगा? सारा काम राज्यसूत्र को हाथ में लेने से ही होता है।

कितने व्यापारों को, खानों आदि को nationalize करना चाहिए, कितनों को नहीं, इसका अत्यन्त उपादेय निर्णय शास्त्र ने पहले से कर रखा है। ऐ भारत के लोगो! अब भी चेतो। पश्चिम की ओर मुख करने से भयङ्कर भूल करोगे।

१०—एक और बात सुनिए। मिश्र देश के विषय में सन् १९५१ सितम्बर २९ को हिन्दुस्तान टाईम्स में निम्नलिखित समाचार छपा—

STREET NAMES AFTER BRITONS IN EGYPT

London, Sept 28—The Alexandria municipality is considering a suggestion to abolish all names called after British personalities, 'must be named after Egyptians worthair of commemoration".

अर्थात्—'सिकन्दरिया की म्यूनिसिपल कमेटी विचार कर रही है कि सब सड़कों के नाम, जो ब्रिटिश व्यक्तियों के नामों पर हैं, बदल कर मिश्र के योग्यतम व्यक्तियों के नामों पर होने चाहिएं'।

भारत में देहली को लीजिए। आज भी वही डूप्ले रोड, क्लाइव रोड, और कर्जन रोड नाम चल रहे हैं। भारतीयता का रक्तसंचार यहाँ कब होगा, यह विचारणीय है। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि इन बातों में पड़ा ही क्या है। संसार में अन्य अनेक कठिन समस्याएं उपस्थित हो रही हैं। ऐसा विचार उन लोगों का ही है, जिन्होंने

केवल अंग्रेजी बातें सीखी हैं, और जिनका हृदय पुरातन ज्ञान के प्रति सोया हुआ है। ये दासता के चिन्ह भारत ने शीघ्र दूर करने हैं।

११—एक और आवश्यक विषय विनिर्गत निर्वासित जनों की पाकिस्तान में रही सम्पत्ति का बदला चुकाना है। कहा गया है कि भारतीय शासन का इस विषय में कोई moral अथवा legal आदि कर्त्तव्य नहीं कि ऐसे लोगों की सम्पत्ति का compensation दिया जाए। सत्य है, यदि यह दुःख दैवी दुःख होता तो भारतीय शासन का इसके प्रति अधिक कर्त्तव्य न होता। यद्यपि दैवी प्रकोपों—यथा भूकम्प अवृष्टि अतिवृष्टि आदि में शासन का पर्याप्त कर्तव्य होता है, पर यह तो मानुष कोप है, अर्थात् कतिपय मनुष्यों के कर्म का फल है। अतएव उस कर्म के सूत्रधार इस आपत्ति के पूरे उत्तरदायी हैं। अपरं च, यदि भारतीय प्रजा इतने वर्ष तक उस कर्म के सूत्रधार मनुष्यों का साथ देती रही है, तो वह भी उस कर्म के फलों के लिए moraly और legal रूप से पूर्णतया बद्ध है। पुनश्च, आपत्ति मानुषी होने के साथ आभ्यन्तर आपत्ति भी है। यदि यह बाहर से आई होती तो अन्य बात थी पर आभ्यन्तर आपत्ति के लिए उसके अभ्या-न्तर कारण सदा उत्तरदायी हैं।

भारतीय शासन को इन सूक्ष्म मर्मों को जानकर दुःख में पड़े उन व्यक्तियों की हानि का पूरा बदला चुका देना चाहिए। यदि यह न किया गया, तो राजा और प्रजा के इस कृष्ण व्यवहार के कारण सारी प्रजा में अन्य कृष्ण व्यवहार भी जाग पड़ेंगे। उनसे देश का आचरण, जो पहले ही पर्याप्त नीचा हो चुका है, बहुत हीन हो जाएगा संसार में यदि morality अथवा कानून का कोई भी शिष्ट स्तर है, तो पूर्वोक्त कथन महापाप है। मैं अधिक क्या कहूं। ईश्वर की सृष्टि में इसका न्याय हुए बिना नहीं रहता। अंग्रेज अपने पापों का फल पा रहा है। रूस के कर्म उसके सामने आने वाले हैं। उन

देशों में तो धर्ममर्यादा नहीं थी, पर भारत की पुण्य भूमि में तो सदा धर्म का अश बना रहा है। यद्यपि हम secular शब्द को व्यर्थ शब्द समझते हैं, तथापि इसका अर्थ यह नहीं कि भारत में से धर्म का अंश सर्वथा मिट गया है। इन secular अथवा non-secular शासनों के ऊपर भी कोई शासन है। उसे मानो अथवा न मानो, पर है वह अवश्य। उस महान् शासन का ध्यान आर्य राजशास्त्रकारों ने सदा रखा है। अतः आचार्य कौटल्य ने ऐसे समयों के लिए लिखा है—**कर्षणं वमनं च**। यदि प्रजा के किसी भाग की सम्पत्ति नष्ट हो जाए, तो शासन दूसरे भागों पर विशेष कर लगा कर उसकी क्षतिपूर्ति करदे।

१२—भारत का व्यय अन्धाधुन्ध बढ़ गया है, यह चिन्ता की बात है। इस व्यय-वृद्धि के कारण देश पर कर बढ़ा दिए गए हैं। कभी लिफाफा दो पैसे का था। आज यह दो आने का है। इस प्रकार करों को बढ़ाते जाना उचित नहीं। योरुप अमेरिका वालों की गति और है; पर हमारा देश अभी हीन दशा में है। उसमें महार्घता दुःख का कारण बन रही है। इस कु-व्यय को हम अत्यन्त सरल उपायों से ठीक कर सकते हैं।

१३—अन्त में हम एक अत्यन्त आवश्यक बात कह देना चाहते हैं। योरुप में civil शासन के लोग युद्धक्षेत्र से सदा पृथक् रहते हैं। इसका फल बहुत दुःखदायी हुआ है। civil शासनवालों को यदि युद्धक्षेत्र में पहुंचना पड़ता, तो वे सोच समझ कर युद्ध आरम्भ करते। फलतः संसार के अनेक भयङ्कर युद्ध रुक जाते। आर्य राजशासन में पूर्वोक्त शासन-प्रकार की घोर निन्दा है। इस विषय पर एक पृथक् ग्रन्थ की आवश्यकता है। अतः पश्चिम का अन्धाधुन्ध अनुकरण करने से पूर्व अनेक विषयों पर गहरा विचार अभीष्ट है।

१४—अब अन्तिम प्रश्न है कि ऐसे काल में आर्यसमाज का क्या कर्त्तव्य है। हमारा उत्तर है—**आर्यसमाज राजनीति का सुदृढ अयन (=मोर्चा) स्थिर करे।** अनेक आर्य पुरुष कहते हैं—यह आर्यसमाज का काम नहीं। आर्यसमाज एक "चर्च" है। चर्च में पूजाधर्म रहता है।

यह महाभ्रान्त विचार है। आर्यसमाज चर्च नहीं है। चर्च की भावना ईसाईयों में है। आर्यसमाज वेदमार्ग के प्रचार के लिए है। वेद में राजनीति भरी पड़ी है। **अतः आर्यसमाज राजनीति का प्रचार ज्ञान और प्रयोग कर सकता है।**

वेदमार्ग में तीन सभाओं को आज्ञा ऋषि ने प्रदर्शित की है—धर्म आर्यसभा, राज आर्यसभा और विद्या आर्यसभा। लोग कहते हैं, आर्यसमाज धर्म आर्यसभा है। ऐसा कहने वालों ने धर्म का अर्थ ही नहीं समझा। **धर्म का अर्थ है कानून वा** law. अतः धर्म सभा कानून की व्यवस्थापिका सभा है। आर्यसमाज वैसा कोई काम नहीं करता। **अतः आर्यसमाज राजनीति में उग्र भाग ले, इस में कोई बाधा नहीं।**

ऐसे भी सज्जन हैं, जिन्हें भय है कि आर्यसमाज की शक्ति थोड़ी है। वह सफल न हो सकेगा। यह भी ठीक नहीं। आज सारा उत्तर भारत आर्यसमाज की ओर आंख लगाए है। कांग्रेस के पास त्याग तपस्या और ज्ञानवाले, विशेषकर भारतीय महान् शास्त्रों के ज्ञान वाले व्यक्ति नहीं हैं। कम्युनिस्टों और सोशलिस्टों के पास भी उच्च व्यक्ति नहीं हैं। आर्यसमाज के पास आज भी कुछ व्यक्ति हैं, जिनकी तुलना करनेवाले देश में अन्यत्र नहीं हैं। आर्यसमाज ने धर्म ज्ञान और चरित्र का स्तर सदा ऊंचा रखा है। अतः आर्यसमाज आज भी इन गुणों से सारे देश की सेवा कर सकता है।

आर्य पुरुषों के हाथ में शासन सूत्र आते ही केवल दस वर्ष में सारा देश संस्कृतज्ञ हो जाएगा। आर्यावर्त में शिक्षा संसार भर की

अपेक्षा अधिक होगी। भारतीय सेना संसार की सेना से चरित्र का अधिक उच्च आदर्श उपस्थित कर सकेगी। भारत की सत्यप्रियता पुनः स्वीकृत होगी। देश में कृतयुग का काल प्रवृत्त हो सकेगा।

शास्त्र में कहा है—

दण्डनीत्या यदा राजा सम्यक् कार्त्स्न्येन वर्तते।
तदा कृतयुगं नाम कालः श्रेष्ठः प्रवर्तते॥

आज राजशासन महात्रुटिपूर्ण है। सर्वत्र दुःख की वृद्धि के चिह्न हैं। चरित्रहीनता की पराकाष्ठा है। अतः आर्यसमाज उस कृतयुग के लाने का प्रयत्न करे।

आर्यसमाज में अनेक ऐसे लोग हैं, जिन्हें आर्यसमाज का गौरव ज्ञात नहीं। उनकी शिक्षा थोड़ी और प्रायः अंग्रेजी को है। वे दूसरों को convert करने की शक्ति का प्रयोग नहीं करते। वे लोग अन्य अनेक कारणों से भी, आर्यसमाज राजनीति का काम करें, इससे भय-भीत हैं।

अनेक लोग कहते हैं—मतप्रदान, (voting) में अनेक पाप होते हैं। आर्यसमाज का स्तर बहुत नीचा हो जाएगा। मैं उनसे पूछता हूं—क्या कांग्रेस द्वारा उसी नीच मार्ग से मत-प्रदान होता है? फिर तो वह देर तक राज नहीं कर सकेगी। निश्चय है कि आर्यसमाज voting में कुछ अधिक पवित्रता ला सकेगा। और इस पवित्रता को लाने के लिए भी आर्यसमाज को राजनीति के क्षेत्र में उतरना चाहिए।

आर्यसमाजों के लाखों सदस्यों ने स्वराज्य के लिए यत्न किया। स्वराज्य आने पर वे शासन करने में सर्वथा पृथक् कर दिए जाएं, उनकी एक बात भी देश में न चले, उनके मूल सिद्धान्तों के विरुद्ध शासक नियम बनाने लगें, यह कितना घोर अन्याय है। अतः यदि

भारत से कम्यूनिजम दूर करना है, यदि सोशलिजम की कुरीतियों को यहां से परे रखना है, यदि संस्कृत भाषा और वेद को उनका उचित स्थान दिलाना है, तो आर्य जनता को अपना भविष्य सोचना पड़ेगा। अधिक देर घातक है।

आर्यजनता निर्णय कर ले कि उनका नेता कौन है? **यदि आर्य-समाज राजनीति में भाग नहीं लेना चाहता, तो वह अपना मत (वोट) मनुष्यमात्र के मित्र वेद की प्रामाणिकता का समूल-उच्छेद करने वालों को तो न दे।**

मज्जेत् त्रयी दण्डनीतौ हतायां।
सर्वे धर्मा न भवेयुर्विरुद्धाः ॥

श्रेष्ठ पुरुष जब राजनीति में भाग नहीं लेगें, तो वेद डूब जाएगा सब धर्म नष्ट हो जाएंगे। संसार यह तो न कहेगा कि **आर्यसमाज ने अपने पांव में आप कुल्हाड़ा मारा।** अथवा आर्यसमाज ने ऋषि का परिश्रम नष्ट कर दिया।

मेरा यह लेख स्पष्ट कर देता है कि **आर्यसमाज का मार्ग क्या है।** विस्तार के भय के कारण मैंने अनेक आवश्यक बातों का वर्णन छोड़ दिया है। यह अनिवार्य था, पर जो कुछ मैंने कहा है, वह मेरे सम्पूर्ण जीवन के अध्ययन का फल है।

सा मा सत्योक्तिः परिपातु विश्वतः ॥

रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा

[प्रकाशित वा प्रसारित प्रामाणिक ग्रन्थ]

१. ऋग्वेदभाष्य–(संस्कृत हिन्दी वा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित)–प्रतिभाग सहस्राधिक टिप्पणियां, १०-११ प्रकार के परिशिष्ट व सूचियां प्रथम भाग ४०-००, द्वितीय भाग ३५-००, तृतीय भाग ४०-०० ।

२. यजुर्वेदभाष्य-विवरण—ऋषिदयानन्दकृत भाष्य पर पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत विवरण । प्रथम भाग ११०-००, । द्वितीय भाग मूल्य ५०-००

३. तैत्तिरीय संहिता—मूलमात्र, मन्त्रसूची सहित । ५०-००

४. तैत्तिरीय संहिता-पदपाठः—५० वर्ष से दुर्लभ ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन, बढ़िया सुन्दर जिल्द १००-०० ।

५. अथर्ववेदभाष्य—श्री पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय कृत । ७-८ काण्ड ४०-००; ९-१० काण्ड ४०-००; ११-१३ काण्ड ३५-००; १४-१७ काण्ड ३०-००; १८-१९ काण्ड २५-००; बीसवां काण्ड २५-०० ।

६. ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका—पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा सम्पादित एवं टिप्पणियों से युक्त । सजिल्द ३०-००, पूरे कपड़े में ३५-००

७. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-परिशिष्ट—भूमिका पर किये गये आक्षेपों के ग्रन्थकार द्वारा दिये गए उत्तर मूल्य ४-००

८. माध्यन्दिन (यजुर्वेद) पदपाठ—शुद्ध संस्करण । ४०-००

९. गोपथ ब्राह्मण (मूल)—सम्पादक श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि । सबसे अधिक शुद्ध और सुन्दर संस्करण । मूल्य ५०-००

१०. कात्यायनीय ऋक्सर्वानुक्रमणी—(ऋग्वेदीया) षड्गुरुशिष्य विरचित संस्कृत टीका सहित । टीका का पूरा पाठ प्रथम बार छापा गया है । विस्तृत भूमिका और अनेक परिशिष्टों से युक्त । मूल्य १००-००

११. ऋग्वेदानुक्रमणी—वेङ्कट माधवकृत । इस ग्रन्थ में स्वर छन्द आदि आठ वैदिक विषयों पर गम्भीर विचार किया है । व्याख्याकार—डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि । उत्तम-संस्करण ३५-००; साधारण २५-००

१२. वैदिक-साहित्य-सौदामिनी—स्व० श्री पं० वागीश्वर वेदालङ्कार। काव्यप्रकाश साहित्यदर्पण आदि के समान वैदिक साहित्य पर शास्त्रीय विवेचनात्मकग्रन्थ। साधारण जिल्द ४५-००, बढ़िया जिल्द ५०-००

१३. ऋग्वेद की ऋक्संख्या—युधिष्ठिर मीमांसक मूल्य ४-००

१४. वेदसंज्ञा-मीमांसा—युधिष्ठिर मीमांसक २-००

१५. वैदिक-छन्दोमीमांसा—यु० मी०। नया संस्करण। २५-००

१६. वैदिक-स्वर-मीमांसा—नया संस्करण। यु० मी० ३०-००

१७. वैदिक-जीवन—श्री विश्वनाथ जी विद्यामार्तण्ड द्वारा अथर्ववेद के आधार पर वैदिक जीवन के सम्बन्ध में लिखा गया अत्यन्त उपयोगी स्वाध्याय-योग्य ग्रन्थ। अजिल्द १२-००, सजिल्द १६-००

१८. वैदिक-गृहस्थाश्रम—पूर्व लेखक द्वारा अथर्ववेद के आधार पर लिखित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ। अजिल्द २६-००; सजिल्द ३०-००।

१९. यजुर्वेद का स्वाध्याय तथा पशुयज्ञ-समीक्षा—ले० पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। बढ़िया जिल्द २५-००, साधारण २०-००।

२०. शतपथ ब्राह्मणस्थ अग्निचयन समीक्षा—लेखक पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। ४५-००

२१. बौधायन-श्रौत-सूत्रम् (आधान-प्रकरण)—सुबोधिनी वृत्ति सहित ४५-००

२२. दर्शपूर्णमास-पद्धति—पं० भीमसेन कृत, भाषार्थ सहित। २५-००

२३. कात्यायनगृह्यसूत्रम्—(मूलमात्र) अनेक हस्तलेखों के आधार पर हमने इसे प्रथम बार छापा है। २५-००

२४. श्रौतपदार्थ-निर्वचनम्—(संस्कृत) अग्न्याधान से अग्निष्टोम पर्यन्त आध्वर्यव पदार्थों का विवरणात्मक ग्रन्थ। सजिल्द ४०-००

२५. संस्कार-विधि—शताब्दी संस्करण, ४६० पृष्ठ, सहस्राधिक टिप्पणियां, १२ परिशिष्ट। मूल्य लागतमात्र १५-००, राज-संस्करण २०-००। सस्ता संस्करण ९-००, अच्छा कागज सजिल्द १०-००।

२६. वेदोक्त-संस्कार-प्रकाश—पं० बालाजी विट्ठल गांवस्कर द्वारा मूल मराठी में लिखे गये ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद। २०-००

२७. अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त श्रौत यज्ञों का संक्षिप्त परिचय—इस में अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, सुपर्णचिति सहित सोमयाग, चातुर्मास्य, वाजपेय आदि यागों का वर्णन है। १२-००

२८. वैदिक-नित्यकर्म-विधिः—पांचों महायज्ञ तथा बृहद् हवन के मन्त्रों की पदार्थ तथा भावार्थ व्याख्या सहित। यु० मी०। सजिल्द ६-००

२९. शिक्षासूत्राणि—आपिशल-पाणिनीय-चान्द्रशिक्षा-सूत्र। मूल्य ७-००

३०. निरुक्त-श्लोकवार्त्तिकम्—केरलदेशीय नीलकण्ठ गार्ग्य विरचित। एक मात्र मलयालम लिपि में ताडपत्र पर लिखित दुर्लभ प्रति के आधार पर मुद्रित। आरम्भ में उपोद्घात रूप में निरुक्त-शास्त्र विषयक सक्षिप्त ऐतिह्य दिया गया है। (संस्कृत) सम्पादक—डा० विजयपाल विद्यावारिधि। उत्तम कागज, शुद्ध छपाई तथा सुन्दर जिल्द सहित। १२५-००

३१. निरुक्त-समुच्चय—आचार्य वररुचि विरचित (संस्कृत)। सं०—युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य २०-००

३२. अष्टाध्यायी—(मूल) शुद्ध संस्करण मूल्य ४-००

३३. अष्टाध्यायी-परिशिष्ट—सूत्रों के पाठ-भेद, सूत्र-सूची अप्राप्य

३४. अष्टाध्यायी-भाष्य—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत। प्रथम भाग ५०-००, द्वितीय भाग ३०-००, तृतीय भाग ३५-००। पूरा सैट ११५-००

३५. धातुपाठ—धात्वादिसूचीसहित, सुन्दर शुद्ध संस्करण। मूल्य ३-५०

३६. क्षीरतरङ्गिणी—क्षीरस्वामीकृत। पाणिनीय धातुपाठ की सबसे प्राचीन एवं प्रामाणिक व्याख्या। सजिल्द ६०-००

३७. धातुप्रदीप—मैत्रेयरक्षित विरचित पाणिनीय धातुपाठ की व्याख्या सजिल्द ४०-००

३८. वामनीयं लिङ्गानुशासनम्—स्वोपज्ञव्याख्यासहितम्। १०-००

३९. संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि—लेखक—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु। प्रथम भाग १५-०० द्वितीय भाग २५-००

४०. महाभाष्य—हिन्दी व्याख्या—(द्वितीय अध्याय पर्यन्त) यु० मी० भाग—I ६०-००, भाग—II अप्राप्य, भाग—III ३०-००।

४१. उणादिकोष—ऋ० द० स० कृत व्याख्या तथा पं० यु० मी० कृत टिप्पणियों, एवं ११ सूचियों सहित। अजिल्द १५-०० सजिल्द २०-००

४२. दशपादी-उणादि-वृत्ति—माणिक्यदेव विरचित वृत्ति। ४०-००

४३. दैवम् पुरुषकारवार्त्तिकोपेतम्—लीलाशुकमुनि कृत। १२-००

४४. भागवृत्तिसंकलनम्—अष्टाध्यायी की प्राचीन वृत्ति। ८-००

४५. काशकृत्स्न-धातु-व्याख्यानम्—संस्कृतरूपान्तर। यु० मी० २०-००

४६. अष्टाध्यायीशुक्लयजुःप्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः—डा० विजयपाल विरचित पी० एच० डी० का महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध (संस्कृत)। ५०-००

४७. सूर्य-सिद्धान्त—हिन्दी व्याख्या सहित। व्याख्याता – श्री उदयनारायणसिंह। इसके आरम्भ में १४६ पृष्ठ की अति विस्तृत एवं विविध विषय परिपूर्ण महत्त्वपूर्ण भूमिका छपी है। ५०-००

४८. विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रम् (सत्यभाष्य-सहितम्)—पं० सत्यदेव वासिष्ठ कृत आध्यात्मिक वैदिक भाष्य। ४ भाग मूल्य ८०-००

४९. शुक्रनीतिसार—व्याख्याकार श्री स्वा० जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती। विस्तृत विषय सूची तथा श्लोक-सूची सहित। उत्तम कागज, सुन्दर छपाई तथा जिल्द सहित। ५०-००

५०. विदुर-नीति—पं० युधिष्ठिर मीमांसक कृत प्रतिपद पदार्थ और व्याख्या सहित। बढ़िया कागज, पक्की सुन्दर जिल्द। ४०-००

५१. सत्याग्रह-नीति-काव्य—आ० स० सत्याग्रह १९३९ में हैदराबाद जेल में पं० सत्यदेव वासिष्ठ द्वारा विरचित, हिन्दी व्याख्यासहित। ३०-००

५२. संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास—युधिष्ठिर मीमांसक कृत नया परिष्कृत परिवर्धित संस्करण। तीनों भागों का मूल्य १२५-००

५३. मीमांसा-शाबर-भाष्य—आर्षमतविमर्शिनी हिन्दी-व्याख्या सहित। व्याख्याकार—युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य प्रथम भाग ५०-००। द्वितीय भाग ४०-००। तृतीयभाग ५०-००। चतुर्थभाग ४०-००। पञ्चम भाग ५०-०० (षष्ठाध्याय पर्यन्त)।

५४. नाडीतत्त्वदर्शनम्—श्री पं० सत्यदेव जी वासिष्ठ। मूल्य ३५-००

पुस्तक प्राप्ति-स्थान—

रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा) १३१०२१

रामलाल कपूर एण्ड संस, २५९६ नई सड़क, देहली